ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 02 जून 2019

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 02 जून 2019 से 08 जून 2019

ज्येष्ठ कृ. – 14 ● वि० सं०–2076 ● वर्ष 61, अंक 22, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. सैक्टर-14, गुरुग्राम में आयोजित हुआ अकादमिक उत्कृष्टता सम्मान समारोह

डी.ए.वी. सैक्टर–14, गुरुग्राम में बारहवीं तथा दसवीं कक्षा के छात्रों के परीक्षा परिणाम में उत्तम प्रदर्शन हेतु सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। कक्षा बारहवीं के 132 छात्र जिन्होंने 90 प्रतिशत से अधिक अंक तथा कक्षा दसवीं के 72 छात्र जिन्होंने 95 प्रतिशत से अधिक अंक बोर्ड परीक्षाओं में अर्जित किए, वे समारोह के चमकते सितारे थे।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के उपाध्यक्ष तथा विद्यालय के अध्यक्ष श्री प्रबोध महाजन जी तथा कार्यक्रम की विशिष्ट अतिथि डी. ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के अंतर्गत पब्लिक स्कूल एवं शिक्षाविदों की निदेशक डॉ. निशा पेशिन की उपस्थिति ने छात्रों का उत्साहवर्धन किया।

अभिवादन उद्बोधन में विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती अपर्णा एरी जी ने छात्रों के परीक्षा परिणाम में उत्तम प्रदर्शन का विस्तृत विवरण देते हुए बताया कि कक्षा बारहवीं का गुणात्मक प्रदर्शन सूचकांक (QPI) 86.36 प्रतिशत तथा कक्षा दसवीं का 87.57 प्रतिशत रहा।

कार्यक्रम की विशिष्ट अतिथि डॉ. निशा पेशिन ने छात्रों के उत्तम प्रदर्शन

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

डी.ए.वी. सैक्टर 15ए, चण्डीगढ़ में महात्मा हंसराज जन्मदिवस पर यज्ञ आयोजित

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल सैक्टर 15ए, चण्डीगढ़ में "महात्मा हंसराज जन्मदिवस" के शुभावसर पर यज्ञ का आयोजन किया गया। प्राचार्या महोदया स्वयं यजमान पद पर सुशोभित हुईं तथा विद्यालय के छात्रावास की सभी छात्राओं सहित अध्यापक व अध्यापिकाएँ तथा अन्य कर्मचारीजन यज्ञ में सम्मिलित हुए। सभी ने बहुत ही श्रद्धा से महात्मा हंसराज जी को याद किया। विद्यालय के धर्माचार्य–आचार्य रमेश शास्त्री ने यज्ञ का ब्रह्मत्व कार्य संभालते हुए यज्ञ के महत्व एवं महात्मा हंसराज के बारे में संक्षिप्त रूप से बताया।

यज्ञोपरान्त, प्राचार्या ने सभी जनों और खासकर छात्राओं को "महात्मा हंसराज द्वारा डी.ए.वी. संस्थान के प्रति समर्पित सहयोग एवं आर्य समाज के क्षेत में कि ये गए महान कार्यों की सराहना की और सभी याज्ञिकजनों को उनसे प्रेरणा लेने के लिए प्रेरित किया। शांति पाठ एवं प्रसाद वितरण कर कार्यक्रम सम्पन्न किया गया।

वैदिक साधन आश्रम में पंच दिवसीय ग्रीष्मोत्सव सम्पन्न

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून का 5 दिवसीय ग्रीष्मोत्सव सोल्लास सम्पन्न हुआ। आश्रम की यज्ञशाला में प्रतिदिन प्रातः व सायं वेद पारायण यज्ञ होता रहा तथा रविवार को यज्ञ की पूर्णाहुति हुई। यज्ञ के ब्रह्मा स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी थे।

मुख्य वक्ता आगरा के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान श्री उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ तथा मुख्य भजनोपदेशक आर्यजगत के प्रसिद्ध गीतकार एवं गायक पं. सत्यपाल पथिक जी थे। मन्त्रपाठ गुरुकुल पौंधा देहरादून के ब्रह्मचारियों ने किया। यज्ञ का संचालन श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी जी, वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर ने किया।

आयोजन की अध्यक्षता देश के प्रसिद्ध ऋषि भक्त श्री योगेश मुंजाल जी ने की। श्री योगेश मुंजाल जी ने कहा कि आश्रम में कई वर्षों बाद आने पर मैंने अनेक सुखद परिवर्तन देखें हैं। सभागार एवं दो भव्य यज्ञशालाओं को देखकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई है। श्री योगश मुंजाल जी ने आश्रम के मंत्री श्री प्रेम प्रकाश शर्मा जी को बधाई दी।

श्री योगेश मुंजाल जी ने कहा कि स्वामी दीक्षानन्द जी अपने प्रवचन में हमें छोटी छोटी बातें बताते थे। वह कहा करते थे कि हमारा जीवन यज्ञमय होना चाहिये। दूसरों को नमस्ते करना तथा झुकना वा सम्मान देना भी एक यज्ञ है। किसी को प्यार से मीठे वचन बोलना भी यज्ञ है। सद्व्यवहार करना भी एक यज्ञ है। परिवार में सभी सदस्य एक दूसरे का आदर करें और अच्छा व्यवहार करें, यह भी एक यज्ञ होता है।

श्री योगेश मुंजाल जी ने कहा हम अपने को सुधारेंगे तो हमारे अच्छे दिन आ जायेगे। मन की शान्ति जीवन में सबसे महत्वपूर्ण है।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 02 जून 2019 से 08 जून 2019

दोनों हाथों से भर-भरकर दे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

दिवो विष्ण उत वा पृथिव्याः, महो विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।
हस्तौ पृणस्व बहुभिर्वसव्यैः, आप्रयच्छ दाक्षिणादोत सव्यात्।।

अथर्व 7.26.8

ऋषिः **मेधातिथिः**। देवता **विष्णुः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(विष्णो)** हे सव्रव्यापक परमात्मन्! **(दिव)** द्युलोक से **(उत वा)** और **(पृथिव्याः)** पृथिवी-लोक से [तथा] **(विष्णो)** हे विश्वान्तर्यामिन्! यज्ञ के देव! **(महः)** महनीय **(उरोः)** विस्तीर्ण **(अन्तरिक्षात्)** अन्तरिक्ष-लोक से **(बहुभिः)**वहुत- से **(वसव्यैः)** ऐश्वर्य-समूहों से **(हस्तौ)** दोनों को **(पृणस्व)** भर ले। **(दक्षिणात्)** दाहिने हाथ से **(आ प्रयच्छ)** दान दे **(उत)** और **(सव्यात्)** बाएँ से [भी] (आ [प्रयच्छ]) दान दे।

● हे विष्णु! हे सर्वव्यापक! हे विश्वान्तर्यामिन्! हे विश्व-ब्रह्माण्ड के स्वामिन! तुम अपूर्व धनाधीश हो। विश्व के द्युलोक, अन्तरिक्ष-लोक और पृथिवी-लोक में जो धन बिखरा पड़ा है, वह सब तुम्हारा ही है। अतः तुम धन-कुबेर हो। एक और तुम धनपति हो ओर हम अकिंचन हैं। अतः हम चाहते हैं कि तुम अपने कोष में से दाहिने-बाएँ दोनों हाथों से भर-भरकर हमें दान दो। तुम्हारे रचे द्यु-लोक में प्रकाश का अनुपम पारावार भरा पड़ा है। वह प्रकाश तुम हमें भी प्रदान करो। तुम्हारे रचे विशाल अन्तरिक्ष-लोक में वायु और पर्जन्य का सागर उमड़ रहा है। उसमें से हमें भी प्राण-वायु और अमृतमय वृष्टि-जल प्रदान करो। तुम्हारे रचे पृथ्वी-लोक से सुवण, रजत, ताम्र अयस, हीरे, मोती आदि ऐश्वर्यों की निधियाँ भरी हुई हैं। वे ऐश्वर्य तुम हमें भी प्रदान करो। अल्प मात्रा में नहीं, प्रचुर मात्रा में प्रदान करो, क्योंकि हम ऐश्वर्यमय जीवन जीने की ही साध लिये हुए हैं।

पर हे विश्वव्यापी देव! हम केवल इन भौतिक ऐश्वर्यों का ही पाकर सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहते। हम शरीरस्थ द्यु-लोक, अन्तरिक्ष-लोक और पृथिवी-लोक के ऐश्वर्यों को भी पाने के लिए आतुर हो रहे हैं। हमारा अन्नमय कोश ही पृथिवी-लोक है, जिसमें शरीर की त्वचा से लेकर अस्थि-पर्यन्त सब ढांचा आ जाती है। असका ऐश्वर्य है शारीरिक स्वास्थ्य और शारीरिक बल, जिसके बिना मनुष्य का जीवन-यापन,व्यान,उदान, समा, इन पांचों से तथा कर्मेन्द्रियों से मिलकर प्राणमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है प्रागण, अपानन आदि क्रियाओं का समुचित रूप से होते रहना तथा हस्त-पादादि कर्मेन्द्रियों को कार्य-क्षम बने रहना। मन और ज्ञानेन्द्रियों से मिलकर मनोमय कोश बनता है। इसका ऐश्वर्य है मन के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों का ज्ञान-प्राप्ति में सहायता होना तथा मन का सत्यसंकल्प करना। ज्ञानेन्द्रियों-सहित बुद्धि विज्ञानमयकोश कहलाता है। इसका ऐश्वर्य है ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान पर ऊहापोह करके निश्चयात्मक ज्ञान अर्जित करना। आनन्दमय कोश द्यु-लोक है, जहाँ हृदयपुरी में प्रतिष्ठित आत्मा के अन्दर ब्रह्म का वास है। इसका ऐश्वर्य है ब्रह्मानन्द की प्राप्ति। हे विष्णुदेव! तुम इन समस्त ऐश्वर्यों से भी भरपूर करने की कृपा करते रहो।

हे जगत्पिता! तुम निरैश्वर्य की अवस्था से पार करके हमें अधिकाधिक ऐश्वर्य प्रदान कर कृतार्थ करते रहो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

त्यागमयी देवियाँ

● महात्मा आनन्द स्वामी

महात्मा आनन्द स्वामी ने देवी पार्वती पर कथा सुनाते हुए बताया कि पार्वती जैसी देवियों को बारम्बार नमस्कार है! इन्हीं देवियों से भारत का गौरव है। इन्हीं से हमारी संस्कृति सबसे ऊँची और पवित्र है, न कि उनसे, जो पश्चिमी सभ्यता में पड़कर अपने-आप को और अपने परिवारों तथा देश को भी नष्ट कर रही हैं। शिक्षा - पति-प्रेम से बड़ा कोई धर्म नहीं और, देश-प्रेम से बड़ा कोई कर्त्तव्य नहीं। स्वामी जी ने कहा बालक तथा बालिकाओं को व्यावहारिक शिक्षा देना जरूरी है, जिससे वे देश की भावी सन्तान का जीवन सुन्दर बने।

अब आगे ...

सीता
संकल्प

अंग्रेजों ने भारत को सदा के लिए दासता की दलदल में फँसाए रखने के लिए सबसे पहला कार्य किया कि भारतवासियों को ये विचार देने शुरु किए कि तुम्हारा कोई इतिहास नहीं और तुम्हारे पूर्वज निरे असभ्य तथा जंगली थे; और इस विचार का प्रचार ऐसे ढंग से किया गया कि भारतवासियों की बड़ी संख्या यही समझने लगी थी कि हमारी कोई प्राचीन संस्कृति नहीं है, और यदि है तो वह हमारे लिए कलंक ही है। जब ऐसा भयंकर अधःपतन हो रहा था तो महर्षि स्वामी दयानन्द ने भारतवासियों को बतलाया कि अपने गौरवमय इतिहास का क्यों विस्मरण कर रहे हो? तुम्हारे खजाने में तो ऐसे अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं जो संसार की और किसी जाति के पास नहीं है।

एक युग ऐसा भी आया कि वेद तथा शास्त्र से मुख मोड़कर भारतवासियों ने स्त्री-जाति को शूद्र का स्थान दे दिया और उसे "ताड़न का अधिकारी" समझा जाने लगा।

सत्य यह है कि जिस देश की देवियाँ इतना ऊँचा और पवित्र चरित्र रखती हैं, वही देश उन्नत होता है। जैसी माताएँ होंगी, सन्तान भी वैसी ही बनेगी। भगवान् मनु ने बाताया है- 'उपाध्याय दे दस गुण आचार्य, आचार्य से सौ गुणा पिता और पिता से हज़ार गुणा बढ़कर माता पूजा के योग्य होती है।' (मुन. 21145)

इसलिए प्राचीन भारत में स्त्रियों का बहुत मान होता था। यही गृहपत्नी कहलाती थी। इन्हीं को लक्ष्मी का नाम दिया जाता था। मनु भगवान् ने तो देवियों के लिए यहाँ तक लिखा है- 'जहाँ स्त्रियों का सम्मान होता है, वहीं देवता वास करते हैं। जहाँ इनका मान नहीं होता वहाँ सम्पूर्ण प्रयत्न, पुरुषार्थ, क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। जहाँ देवियाँ दुःखित होकर शोक में पड़ी रहती हैं, वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। जहाँ वे शोक नहीं करतीं और सुखी रहती हैं, उस कुल की सर्वदा वृद्धि होती है, वह फलता-फूलता है।'

और यही कारण था कि भारतवर्ष सृष्टि के आरंभ से लेकर आज से पूर्व दो हज़ार वर्ष-पर्यन्त सुखी रहा और यह सारे संसार का गुरु बना रहा। परन्तु जब 'महाभारत'-युद्धकाल से स्त्रियों का अपमान होने लगा, तब से भारत भी अपमानित होने लगा।

पुरुष ने यह नहीं देखा कि उसकी धर्मपरायणा पत्नी, जो सदा उसकी सेवा अपना मुख्य कर्त्तव्य समझती है, कितनी दुःखित है। ऐसे वातावरण में देवियों ने ही धर्म-मर्यादा और प्राचीन संस्कृति की कुछ ज्योति प्रज्ज्वलित करके रखी है। यदि इसकी रक्षा न की गई तो इतने भयंकर तूफान उठ रहे हैं कि यह ज्योति भी बुझ जाएगी। इसे प्रज्ज्वलित रखने का सबसे बड़ा साधन यही है कि पतिव्रत-धर्म और पत्नी के अतिरिक्त बाकि सारी स्त्रियों को माता-समान समझने का प्राचार किया जाए। इन दोनों धर्मों की सबसे सुन्दर और उज्ज्वल सत्य गाथा 'रामायण' में राम और सीता की मिलती है। सीता माता का जीवन ऐसे है कि हर बालक, बालिका, पुरुष, स्त्री, युवक, वृद्ध सबको बार-बार पढ़ना-सुनना चाहिए और यत्न करना चाहिए कि हमारे परिवारों में देवियों को फिर वही स्थान प्राप्त हो जाए जो वैदिक काल में था।

मिथिला देश के आदर्श राजा जनक जी को जब सीता जैसी सुन्दर पुत्री मिली तो वह बहुत प्रसन्न हुए, और सीता को सुशिक्षित बनाने का पूरा प्रबन्ध किया गया। राजा जनक स्वयं बड़े धर्मात्मा थे। उस काल के ऋषि, मुनि, ब्राह्मण, सब उनका सत्संग करने आते और अपने संशय निवृत्त कराते थे। जनक को ये सारे विद्वान् 'राजर्षि' के नाम से सम्बोधित किया करते, और जनक जी इसके पूर्ण अधिकारी भी थे। संसार में रहकर भी संसार से अलिप्त रहना सीखना हो तो जनक महाराज से सीखा जा सकता है। प्रबंधक इतने निपुण थे कि उन्हें राज्य की

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

धर्म शब्द का अर्थ

● भद्रसेन

1. स्वभाव – भारतीय शास्त्रों में धर्म शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। चाहे वहाँ मूल अर्थ धारण ही है, पर प्रकरण के अनुरूप विविध भावों का अभिव्यंजक बन गया है। वेदों में धर्म की अपेक्षा धर्मन शब्द अधिक आया है। वहाँ वह अधिकतर सूर्य आदि प्राकृतिक पदार्थों के साथ संयुक्त होकर प्रयुक्त हुआ है। अतएव भौतिकशास्त्र वैशेषिक दर्शन में धर्म शब्द स्वभाव अर्थ में है। इसी लिए वहाँ साधर्म्य, वैधर्म्य का विशेष प्रयोग है। वैशेषिक में रूप, रस, शब्द आदि 24 गुण माने गए हैं। वे जल, पृथिवी, अग्नि आदि द्रव्यों में कहीं समान रूप में अर्थात् एक जैसे तथा कहीं विषम रूप में मिलते हैं। सामान्य भाषा में जब हम यह कहते हैं कि जल का धर्म, अग्नि का धर्म। तब उस का अर्थ, भाव स्वभाव ही होता है। भौतिक पदार्थों के साथ ही मूलतः धर्म शब्द का प्रारम्भ में प्रयोग हुआ। ये प्राकृतिक व्यवस्थाएँ सब के लिए एक सी होती हैं। अतः उन प्राकृत व्यवस्थाओं को धारण करना ही धर्म है। अतः यहीं से धर्म शब्द का प्रारम्भ हुआ और यही धर्म सब का एक–सा है। इसीलिए ही इसी प्रसंग, दृष्टिकोण से प्रचलित हुआ, कि धर्म तो सब का एक ही है।

2. सदाचार– मनुस्मृति आदि स्मृतिग्रन्थों को धर्मशास्त्र (धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः मनु. 2, 10) माना गया है। वहाँ धर्म शब्द सदाचार–आचार–आचरण, अच्छाई, गुण के अर्थ में आया है। जैसे कि –

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।6,91।।

और वहाँ इस को परमधर्म (आचारः परमो (प्रथमो) धर्मः 1, 108) कहा है। अर्थात धर्म शब्द अन्य अर्थों, भावों की अपेक्षा आचरण अर्थ में मुख्य रूप से आता है। वैसे महाभारत में धारण की भावना के आधार पर धर्म को परिभाषित किया है। इस दृष्टि से शान्ति 110, 10, 251, 4, कर्ण 49, 50 जैसे श्लोक द्रष्टव्य हैं।

3. धार्मिक कर्मकाण्ड (जिस में देवदर्शन – पूजन, तीर्थ यात्रा, व्रत–पर्व, जप–तप, स्मरण–ध्यान, विशेष धर्मग्रन्थ–पाठन, धर्मस्थल–गमन विशेष, चिह्न–प्रतीक धारण (तिलक–मौली–उपवात, ककार) आदि आते है। इस के अर्थ में अब धर्म शब्द अधिक समझा जाता है।

4. कर्तव्य माता–पिता–शिक्षक आदि के प्रति अपने कर्तव्य का पालन, उन की आज्ञा का पालन, सेवा करना (मनु. 2, 227–237)

5. सत्य–प्रिय बोलना (मनु. 4, 138)

6. पति–पत्नी का परस्पर सच्चा–सुच्चा होना (मनु. 9–101), सम्बन्धों की पवित्रता।

7. आठ प्रकार के विवाह प्रकरण में विधि और धर्म पर्याय रूप में दर्शाए गए हैं। (मनु. 3,27, 28,29,31)

8. विविध प्रकार के विवादों के निर्णय के प्रसंग में अर्थात् निर्णय के अर्थ में कहीं–कहीं धर्म शब्द का प्रयोग किया गया है (8,266,9,5)

वस्तुतः ऊपर आई ये सारी बातें उस–उस क्षेत्र की व्यवस्थाएँ हैं। जैसे कि बोलने की व्यवस्था, सम्बन्धों को निभाने की परम्परा, पति–पत्नी की व्यवस्था, समाज में रहने का व्यवहार, आपस के विवादों के हल करने की व्यवस्था। अतः धर्म शब्द का कोई एक अर्थ है, तो वह व्यवस्था है। इस का विशेष विवेचन 'सरल–सुखी जीवन' में देखें।

धर्म शब्द के अनेक अर्थ होने से और आज व्यवहार में धर्मशब्द से हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म आदि के रूप में लिए जाने कारण ही भारतीय संविधान में धर्म स्वतन्त्रता और धर्म निरपेक्षता का विधान है। आज की परिस्थितियों में चक्रव्यूह का दूसरा रूप है।

2. शास्त्र (सर्वस्य लोचनं शास्त्रम्)

हितोपदेश की प्रस्तावना में शास्त्र, ज्ञान की उपयोगिता, महत्ता बताते हुए कहा है– 'सर्वस्य लोचनं शास्त्रम्, यस्य नास्त्यन्ध एव सः' जीवन को सरल, सुखी, सफल बनाने वाला, दूसरा साधन है– शास्त्र। शास्त्र का सीधा सा अर्थ है– सीधी राह बताने वाला, क्योंकि किसी बात का पता लगने पर ही व्यक्ति कुछ करने में या कहीं जाने में समर्थ होता है। अतएव विद्या, ज्ञान की प्रकाश, आँख से उपमा दी जाती है और इसी लिए कहा जाता है–'संशयों, सन्देहों को दूर करके छिपी हुई, रहस्यपूर्ण बात को बताने वाला ही शास्त्र कहलाता है। अतः पढ़ा–लिखा आँखों वाले की तरह होता है। हाँ, जिस के पास शास्त्र रूपी आँख नहीं है, वह अन्धे की तरह ठोकरें ही खाता रहता है अर्थात् असफल होता है। आज के विकसित युग में तो विशेष रूप से किसी यन्त्र, यान को समझने के बाद ही वर्त कर उस से लाभ उठा सकते हैं।

मानव जीवन की अन्य प्रणियों की अपेक्षा उत्कृष्टता धर्म के पश्चात ज्ञान से ही है। ज्ञान के कारण ही मनुष्य ने सारी प्रगति की है। तभी तो कवि ने कहा है– आहार–निद्रा–भय–मैथुन (परिवार परम्परा) की प्रवृत्ति सभी प्राणियों में स्वभाविक रूप से है। पर धर्म और ज्ञान के कारण ही मानव अन्य योनियों से अनोखा सिद्ध होता है। तभी तो वह धर्म (व्यवस्था, मर्यादा, कर्तव्य) और ज्ञान के कारण ही मनुष्य ने सारा विकास किया है और विविध प्रकार की सफलताएँ प्राप्त की हैं। व्यवहार की बातों का ज्ञान गुरु, शास्त्र और रिवाज से होता है। अतः तीनों की सार्थकता अच्छा ज्ञान कराने में ही है।

गीताकार ने सोलहवें अध्याय के अन्तिम दो श्लोकों में शास्त्र के सम्बन्ध में बहुत उपयोगी विवेचन किया है। इन दोनों श्लोकों को इस प्रकार हिन्दी भाषा में प्रिं. जगतावली सूद ने काव्यरूप दिया है–

'सुशास्त्र–विधियों को पुरुष
जब अपने मन की करता है।
न वह सिद्धि सुख को पाता है।
ना परमागति पा सकता है।।23।।
क्या करना है या न करना?
शास्त्र प्रमाण इस में समझो।
सत् शास्त्र विधान करें जैसा
अर्जुन! वैसा ही कर्म करो।।24।।

इसीलिए गीता में कहा है, कि कौन कार्य कब, कैसे करने योग्य है? क्या नहीं अर्थात अकर्तव्य, अकार्य है? इस की व्यवस्था, निर्णय, निश्चय शास्त्र द्वारा ही होता है। जीवन साधक कार्य अनेक प्रकार के हैं अर्थात् हमारा जीवन एकांगी न हो कर सर्वांगीण है, क्योंकि हमारा जीवन विविध प्रकार की ज़रूरतों से जुड़ा हुआ है। तभी तो भारतीय परम्परा में जीवन का उद्देश्य–धर्म–अर्थ, काम, मोक्ष के रूप में है। जिस को पुरुषार्थ चतुष्टय का नाम दिया गया है।

आज शास्त्र शब्द केवल धर्मग्रन्थ के रूप में लिया जाता है। जैसे कि धर्म के विवेचन में पहले कहा जा चुका है, कि धर्म के मुख्य अर्थ आचरण की अपेक्षा कर्मकाण्ड को अधिक महत्त्व देने के कारण धर्म संकुचित, सीमित होकर रह गया है क्योंकि अपनेपन के पक्षपात, मोह के कारण अपने–अपने कर्मकाण्ड को ही सर्वस्व समझ लिया गया। तभी तो इस प्रकार के वाक्य बोले जाते है, कि इस जैसी तो कोई भी बात नहीं है। जिस के कारण जीवन के सम्बन्ध में सोच भी सीमित हो गई है। हम कुएँ के मेंढक की तरह अपने–अपने धर्मशास्त्र में निर्दिष्ट चित्रण को अन्तिम, पूर्णमानते है। वस्तुतः शास्त्र शब्द अपने–अपने क्षेत्र, प्रकरण के अनुरूप ही लेना चाहिए। जैसे खेती में कृषिशास्त्र के अनुरूप ही निर्णय लेना चाहिए। सर्वत्र धार्मिक कर्मकाण्ड को कसौटी नहीं बनाना चाहिए। अपने–अपने के मोह से पक्षपात प्रबल होता है।

अपनेपन के कारण प्रत्येक अपने धर्मग्रन्थ को पूर्ण, सत्य, निष्कलंक मानता है। उस के लिए अनेक तर्क तथा प्रमाण देता है और शास्त्रार्थ करता है। आज धर्मशास्त्रों की संख्या सैकड़ों में है और उस–उस के साथ लगते शास्त्रों की भी गिनती की जाए, तो लाखों में पहुँच जाती है। तब किस–किस को पढ़ पाए? इस से भी बड़ी समस्या यह आती है, कि अधिकतर धर्मशास्त्र अति प्राचीनभाषा में हैं। उन के भाष्यकारों में प्रायः मतभेद मिलता है। इन की बातों में परस्पर विरोध प्राप्त होता है, कोई पूर्व में ले जाना चाहता है तो कोई पश्चिम को। उदाहरण के लिए कोई मुण्डन को धर्म का नाम देता है, तो कोई केश रखने को धर्म के रूप में स्वीकार करता है। कोई जाति भेद को मानने को धर्म कहता है, तो दूसरा वर्ग जाति भेद भुला कर एक मानव रूप में लेने को धर्म समझता है। एक की दृष्टि में नारी शिक्षा, नारी सम्मान धर्म है, तो कुछ की दृष्टि में नारी शिक्षा जहाँ अधार्मिक बात है, तो वहाँ नारी निन्दनीय, उपेक्षणीय है।

धर्म के आज के रूप में परसपर विविध प्रकार के विरोध प्राप्त होते हैं। जैसे कि भिन्न–भिन्न धर्म के अलग–अलग शास्त्रों में अपने–अपने नामों की बड़ी महिमा भरी हुई है। एक समय में व्यक्ति एक नाम को एकाग्रता के लिए अपना सकता है। हाँ, नाम स्मरण, जाप से एकाग्रता, हृदय शुद्धि ही हो सकती है, न कि वह पुण्य संचय, पुण्य प्राप्ति का साधन है। आज अनेक प्रकार से नाम स्मरण के रूप प्रचलित किये जा रहे हैं। कहीं भरी सभा में कीर्तन हो रहा है, तो कही कोई लिख कर (अपने) नामों की झड़ी लगा रहा है क्योंकि तभी पुण्य का अर्जन हो सकता है। आज तो नाम बैंको की बाढ़ आई है। नाम के स्मरण और जाप से हर इच्छा की पूर्ति या पाप माफी की घोषणा की जा रही है। जब कि आज नाम स्मरण से होने वाले चमत्कारों की अनेकों कहानियाँ फैला दी गई हैं, कि इस–नाम के स्मरण से यह–यह सिद्धि, तरने की स्थिति अमुक को प्राप्त हुई।

हाँ, कुछ धर्मशास्त्रों में प्रकृति के नियमों से विरुद्ध बातों का वर्णन मिलता है। जैसे कि पृथिवी को चपटी बताना और सूर्य द्वारा पृथिवी की परिक्रमा करना, चन्द्रमा का घटना–बढ़ना श्राप से मानना (क्योंकि गौतम की पत्नी अहिल्या से इन्द्र का छल पूर्वक व्यभिचार करना फिर एतदर्थ श्राप देना) जैसे कि अवतारवाद को ले कर उन के जन्म के सम्बन्ध में अनोखी–बातें प्रचलित हैं। उदाहरण के लिए कृष्णजन्म को ही लेते हैं–

देवकी की विवाह वेला में आकाशवाण ी का होना। फिर सातवें गर्भ का वसुदेव की दूसरी पत्नी रोहणी के यहाँ परिवर्तित होना। विष्णु का कृष्ण रूप में और लक्ष्मी का यशोदा के यहाँ जन्म लेना। जन्म होते ही बेड़ियों और दरवाजों का स्वतः खुल जाना। गोकुल ले जाते समय यमुना जल का पैर छूने के लिए उभरना, फिर नीचे उतरना।

श्रीकृष्ण द्वारा पूतना आदि का वध, कालिया मर्दन या उन का आंगिरस आदि के श्रापवश उस–उस रूप में होना और श्री कृष्ण के स्पर्श से उद्धार होना। इन प्रकार अवतार के कल्पना को सम्भव बनाने और अवतरित के महत्त्व को दर्शाने के लिए आख्यानों पर आख्यान घड़े गए। जिन में न तो प्रकृति नियमों का ध्यान रखा गया और न ही यह कल्पना सम्भव भी है, इस को विचार में रखा गया है।

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

वेदों में अग्निहोत्र का विधान ही इसके ईश्वरप्रोक्त होने का प्रमाण

● मनमोहन कुमार आर्य

वेदों का आविर्भाव सृष्टि के आरम्भ में हुआ था। अन्य सभी मत–मतान्तर विगत लगभग 2500 वर्ष व उसके बाद प्रचलित हुए हैं। मत–मतान्तरों के आविर्भाव पर जब हम विचार करते हैं तो उसका कारण अविद्या सिद्ध होता है। महाभारत काल के बाद समस्त संसार में ज्ञान–विज्ञान का लोप होकर अविद्या तिमिर का प्रसार हुआ जिससे लोग अवैदिक व अज्ञानपूर्ण कार्य करने लगे। अविद्या के कारण अन्धविश्वास बढ़ते गए जिससे मनुष्य को सामान्य जीवन व्यतीत करने में असुविधा होने लगी। इस समस्या के समाधान के लिए तत्कालीन पुरुषों, चिन्तक व विचारकों ने अपनी–अपनी मति व बुद्धि के अनुसार उनको उपलब्ध ज्ञान का प्रचार करने का प्रयास किया जिसने बाद में मत–मतान्तर का रूप ग्रहण कर लिया। सभी मतों की पुस्तकों की परीक्षा करने पर एक सामान्य बात दृष्टिगोचर होती है कि वेद व ऋषियों के ग्रन्थों के अतिरिक्त महाभारत काल के बाद ऐसा कोई मत उत्पन्न नहीं हुआ जिसमें अविद्या न हो। यदि इन मतों में अविद्या न होती तो किसी को भी कोई कष्ट व परेशानी न होती। अविद्या के कारण ही इन मतों व इनसे भिन्न मतों के मानने वालों के बीच समस्याएँ उत्पन्न होती गईं। लोगों को इन समस्याओं का मूल कारण पता नहीं चला। नए–नए लोग उत्पन्न होते गए और नए–नए मतों का प्रचलन होता रहा। कुछ मतों में कट्टरता के कारण उनमें अधिक मतों व उनकी अधिक शाखाओं का आविर्भाव व प्रचलन नहीं हुआ तथापि सभी मतों की कुछ शाखाएँ अविद्या व अन्य कारणों से उत्पन्न हुईं और आज तक ज्ञान व विज्ञान की वृद्धि होने पर भी उनमें परस्पर सौहार्द व मेलजोल स्थापित नहीं हो सका है। **महाभारत के बाद जो मत अस्तित्व में आए, उनमें से किसी में अग्निहोत्र देव–यज्ञ का विधान व उल्लेख नहीं है। इसका कारण उन मतों का मनुष्यों से उत्पन्न होना जो स्वभाव व प्रकृति से अल्पज्ञ होते हैं, होना है। अल्पज्ञ का अर्थ एकदेशी आत्मा होता है जो सर्वव्यापक सर्वज्ञ परमात्मा के समान निर्भ्रान्त ज्ञान को कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। ईश्वर भी इस व्यवस्था को बदल नहीं सकता है।** यह भी तथ्य है कि ईश्वर सृष्टि के आरम्भ में एक ही बार चार ऋषियों को उत्पन्न कर उन्हें एक–एक वेद का ज्ञान देता है। उसके बाद प्रलय पर्यन्त वह किसी मनुष्य या विद्वान को ज्ञान नहीं देता।

अग्निहोत्र करने की आज्ञा वेदों में की गई है। वेद परम पिता ईश्वर का ज्ञान है। मनुष्यों का यह सामर्थ्य नहीं कि वह वेदों की रचना कर सकें। मनुष्य अनेक प्रकार की रचनाएँ करने में समर्थ है। उसने कम्प्यूटर, वायुयान, रेलगाड़ी, बडे–बड़े भवन, जलयान, मोबाइल फोन, टी.वी. आदि नाना प्रकार के जटिल कार्यों को करके दिखाया है। **इतना होने पर भी मनुष्य व वैज्ञानिक मनुष्य की आँख, नाक, कान, अंगुली, इन्द्रियाँ, मन व बुद्धि आदि मानव शरीर के अंग–प्रत्यंगों को कमी नहीं बना सकते। इसी प्रकार वेद ज्ञान की उत्पत्ति भी मनुष्य कदापि नहीं कर सकते। मनुष्यों ने अनेक मत चलाएँ हैं परन्तु वह सभी अविद्या से युक्त हैं और विष सम्पृक्त अन्न के समान त्याज्य हैं। परमात्मा की प्रति निर्दोष होती है। वेद में कही सभी बातें व मान्यताएँ सत्य एवं सृष्टि क्रम सहित विज्ञान के भी अनुकूल हैं।** इससे यह सिद्ध हो जाता है कि सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने ज्ञान दिया था। वेद वही ज्ञान है। वेदों में अग्निहोत्र की आज्ञा होने से सभी मनुष्यों का कर्तव्य है कि वह दैनिक यज्ञ किया करें जो नहीं करते वे ईश्वर की आज्ञा तोड़ने के दोषी होते हैं। प्राचीन काल में सभी लोग यज्ञ किया करते थे। यहाँ तक कि राम व कृष्ण जी भी यज्ञ किया करते थे। इसके प्रमाण रामायण एवं महाभारत में उपलब्ध होते हैं। यज्ञ क्यों किया जाता है और इससे क्या लाभ होते हैं, इसके लिए महर्षि दयानन्द ने पंचमहायज्ञ विधि में जो कहा है, उसे हम प्रस्तुत करते हैं।

महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि **अग्नि व परमेश्वर के लिए, जल, और पवन की शुद्धि, व ईश्वर की आज्ञा पालन के अर्थ होत्र–जो हवन, अर्थात् दान करते हैं, उसे "अग्निहोत्र" कहते हैं। केशर, कस्तूरी आदि सुगन्ध, घृत–दुग्ध आदि पुष्ट, गुड़–शर्करा आदि मिष्ट तथा सोमलतादि रोगनाशक औषधि, जो ये चार प्रकार के बुद्धि वृद्धि, शूरता, धीरता, बल और आरोग्य करनेवाले गुणों से युक्त पदार्थ हैं, उनका होम करने से पवन और वर्षा–जल की शुद्धि करके शुद्ध पवन और जल के योग से पृथिवी के सब पदार्थों की जो अत्यन्त उत्तमता होती है, उससे सब जीवों को परम सुख होता है। इस कारण उस अग्निहोत्र कर्म करनेवाले मनुष्यों को भी जीवों का उपकार करने से अत्यन्त सुख का लाभ होता है तथा ईश्वर भी उन मनुष्यों पर प्रसन्न होता है। ऐसे–ऐसे प्रयोजनों के अर्थ अग्निहोत्रादि का करना अत्यन्त उचित है।**

यज्ञ करने से मनुष्यों को अनेक लाभ होते हैं। ईश्वर की आज्ञा का पालन करने से हम पाप करने से बचते हैं तथा यज्ञ के रूप में जिसे ऋषि दयानन्द ने महायज्ञ कहा है, हम पुण्य के भागी होते हैं। यज्ञ से वर्षा जल व वायु की शुद्धि होने से मनुष्यों की अनेक प्रकार के साध्य व असाध्य रोगों से रक्षा होती है। वह स्वस्थ रहने से दीर्घायु एवं बलवान होते हैं। रोगरहित, स्वस्थ तथा बलवान मनुष्य अधिक सुखी होता है। यह सबसे मुख्य लाभ यज्ञ करने से मनुष्यों को मिलता है। मनुष्य का परजन्म भी यज्ञ करने से सुधरता है। यज्ञ ईश्वर वा मोक्ष प्राप्ति में भी अग्निहोत्र यज्ञ सहायक है। यज्ञ से किसी का अपकार नहीं होता अपितु सभी जीवों वा मनुष्य आदि प्राणियों को अनेक प्रकार के लाभ यज्ञ से होते हैं। यज्ञ करने से पर्याप्त मात्रा में वर्षा होती है। वर्षा का जल खेतों व कृषि कार्यों के लिए उत्तम खाद का काम करता है। वर्षा जल से उत्पन्न अन्न की गुणवत्ता श्रेष्ठ होती है। यज्ञ करने से मनुष्य का आत्मा पवित्र भावों से युक्त होता है। यज्ञ से ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना भी होती है जिसका लाभ ईश्वर से मनोवांछित सुख प्राप्ति के रूप में होता है। यज्ञ का एक लाभ यह भी होता है कि इससे निवास स्थान व गृह का वायु गर्म होकर हल्का हो जाता है और रोशनदान, खिड़की व दरवाजों से बाहर चला जाता है। इससे जो अवकाश उत्पन्न होता है उसमें बाहर का शुद्ध वायु शीतल होने से भारी होता है वह घर के भीतर आता है। यज्ञ करने से रोग कृमि मरते व दूर भागते हैं। हमारा अनुभव है कि जिस परिवार में यज्ञ होता है और जहाँ देशी गाय के दूध का सेवन किया जाता है वहाँ घर व परिवार के सदस्यों में रोग बहुत कम होते हैं। अभाव दूर होते हैं तथा समृद्धि आती है। बच्चे शुद्ध व पवित्र बुद्धि वाले होते हैं और शिक्षा व विद्या की दृष्टि से वे अन्यों से अधिक उन्नत होते हैं। ऐसे अनेक लाभ यज्ञ व अग्निहोत्र को करने से होते हैं।

हमारा यह अनुमान व मत है कि यदि वेद ईश्वर ज्ञान न होता तो उसमें ईश्वर के सत्यस्वरूप, जीवात्मा के स्वरूप व यज्ञ आदि का सत्य–सत्य वर्णन होना सम्भव नहीं था। ईश्वर, जीव, प्रकृति, यज्ञ व हमारे अन्य कर्तव्यों का ज्ञान कराने के कारण वेद हमारा परम धर्म है। हमें वेदों का स्वाध्याय करने के साथ दूसरों को वेदों को सुनाना चाहिए। हम जितना वेदों को जानते हैं उससे अधिक जानने का प्रयत्न करना चाहिए और जितना हम जान पाते हैं उतना दूसरों को भी बताना व पढ़ाना चाहिए। इससे हमें व अन्यों को लाभ होगा। जीवात्मा की सबसे बड़ी उपलब्धि सत्य ज्ञान की प्राप्ति ही होती है। धन की प्राप्ति व इसका लाभ तब तक ही होता है जब तक हम स्वस्थ रहते हैं। उसके बाद वृद्धावस्था व मृत्यु के बाद मनुष्य का ज्ञान, उसके संस्कार तथा कर्म पूंजी ही परलोक में सहायक होती है। हम जितना यज्ञ करेंगे उससे हमारे शुभ कर्मों का संचय बढ़ेगा और हम परजन्म में मोक्ष को न भी प्राप्त करें परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य व देवयोनि सहित अनेक प्रकार के सुखों को अवश्य प्राप्त होंगे, यह सुनिश्चित है। हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हम कभी वेद विरुद्ध जड़–मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष आदि अवैदिक कृत्यों को न करें और न ही इनमें विश्वास रखें अन्यथा हम अपने भविष्य के सुखों को कम व नष्ट करेंगे। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन:09412985121

☞ पृष्ठ 03 का शेष

धर्म शब्द का अर्थ

एक विचारक जब निष्पक्ष रूप से ऐसे शास्त्रों को पढ़ता है, तो अन्त में यह लिखने के लिए विवश हो जाता है। जैसे कि बिशप जान्स राबिन्सन अपनी पुस्तक– 'अरनेस्ट टू गॉड' में लिखते हैं– आज के दिन ईसाईयत के घिसेपिटे चित्रणों द्वारा समाज की जो हानि हो रही है, उस को नकारा नहीं जा सकता। धर्म के सम्बन्ध में तर्कशून्य, असत्य भ्रान्त विचारों की अपेक्षा आज ईश्वर और स्वर्ग के सम्बन्ध में परिमार्जित एवं तर्कसंगत विचारों की आवश्यकता है। जिस का कि बाईबल में अभाव है। चौथे आसमान पर ईश्वर रहता है, केवल ईसा ही उन का इकलौता बेटा है, कुमारी मरियम ने कुमारी रहते हुए भी अपने गर्भ से ईसा को जन्म दिया। ईसा स्वयं ईश्वर है। बाबा आदम तथा माता हव्वा का स्वर्ग से उतरना कार्टूनों की चित्रकथा से अधिक नहीं।

मुहम्मद अली अपने कुरान के अंग्रेजी अनुवाद में लिखते हैं– As they are Narrted in the Bible the same are Narrated in the Holly Kuran अर्थात् जो कुछ बाईबल में लिखा है, वहीं कुछ कुरान में लिखा है। आज शास्त्रों की संख्या का पारावार नहीं। अतः कोई चाहते हुए भी अपनी अल्प आयु और स्वल्प शक्ति के कारण इन सब को पढ़ नहीं सकता, वहाँ इन में प्रकृति नियमों से विरुद्ध, असम्भव कल्पनाओं का अम्बार और परस्पर विरुद्ध वर्णन होने से अन्त में यही कहना पड़ता है, कि ऐसी स्थिति में एक यही रास्ता रह जाता है, कि जो–जो सार रूप जँचती बातें है, उन्हीं को अपनाए? अन्य बेतुकी बातों को बिना झिझक छोड़ने से ही कोई सुखी रह सकता है।

जैसे कि हिन्दी भाषा में यह दोहा प्रसिद्ध है–

साधु ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुहाय।
सार–सार गहि लेत है, थोथा देय उड़ाय।।

182, शालीमार नगर
होशियारपुर, पंजाब

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द

● डॉ. भवानीलाल भारतीय

(प्राप्त अप्रकाशित रचनाओं में से)

ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी में जन्म लेकर जिन महापुरुषों ने भारतीय धर्म, राष्ट्र, समाज तथा संस्कृति की अपूर्व सेवा की, उनमें आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द का नाम अन्यतम है। दयानन्द का जन्म सौराष्ट्र (गुजरात काठियावाड़) के अन्तर्गत ईस्वी राज्य के टंकारा ग्राम में 1881 वि. (1824 ई.) में हुआ। उनके पिता करसन जी लाल जी त्रिवेदी सामवेदी सहस्त्र औदीच्य ब्राह्मण थे। उनके यहाँ जमींदारी तथा लेन–देन का काम होता था। उनका बाल्यकाल का नाम मूल जी अथवा मूलशंकर था। 1888 वि. में बालक मूलशंकर का यज्ञोपवीत–संस्कार हुआ। तदनन्तर वे अपने पिता के सान्निध्य में रहकर यजुर्वेद–संहिता कण्ठस्थ करने लगे। 1894 में यजुर्वेद कण्ठस्थ कर लेने के पश्चात् उन्होंने अन्य वेदों का पाठ सीखा और संस्कृत–व्याकरण के 'शब्द रूपावली' आदि कुछ ग्रन्थों का भी अभ्यास किया।

शिवरात्रि व्रतोत्सव और मूर्तिपूज के प्रति अश्रद्धा

मूलशंकर के पिता कट्टर शिवोपासक थे। आयु के 13वें वर्ष अब मूलशंकर किशोरावस्था में थे, पिता की प्रेरणा से 1984 वि. माघ कृष्णा चतुर्दशी को उन्हें शिवरात्रि का व्रत और रात्रि–जागरण करने का प्रसंग उपस्थित हुआ। माता की असहमति होने पर भी पिता के आग्रहवश मूलशंकर को शिवव्रत में दीक्षित होना पड़ा। रात्रि को जब मंदिर में सभी उपासक निद्रागत हो गए, तब भी मूलशंकर आँखों पर जल के शीतल छींटे दे–देकर अपने को अतन्द्र रखते रहे, ताकि जागरण–व्रत का व्यतिक्रम न हो। इसी समय एक विचित्र घटना घटी। एक चूहा शिव–पिण्डी पर चढ़े हुए अक्षतों तथा अन्य देव–निर्माल्य को खाने लगा। इस अकल्पनीय दृश्य को देखकर प्रत्युत्पन्नमति बालक के मन पर आघात–सा लगा। उन्होंने पिता को तुरन्त जगाया और पूछा – "कैलासवासी, त्रिशूलधारी, उपरिमित शक्तियुक्त, असुर–संहारी महादेव के लिए अर्पित इस प्रसाद को यह अपदार्थ–भक्षी चूहा खा रहा है। क्या यह देव–शक्ति की विडम्बना नहीं है?" पुत्र के इस प्रश्न का पिता संतोषजनक समाधान नहीं कर सके। फलतः बालक उसी समय पिता की आज्ञा लेकर एक प्रहरी के साथ घर लौटा आया और माता से कुछ मिष्ठान्न लेकर उसने अपना व्रत भंग कर दिया। शिवरात्रि को घटित इस घटना ने बालक मूलशंकर के हृदय में मूर्तिपूजा की उपादेयता तथा औचित्य के विषय में एक सहज–अविश्वास तथा अश्रद्धा का भाव उत्पन्न कर दिया।

इस घटना के पश्चात् मूलशंकर के परिवार में दो अन्य दुःखद घटनाएँ घटित हुईं जिनके कारण उनका मन वैराग्योन्मुख हो गया। जब वे 16 वर्ष के थे तब 1896 वि. में उनकी सहोदरा भगिनी विषूचिका रोग से ग्रस्त होकर दिवगंत हो गई। इस अप्रत्याशित मृत्यु ने मूलशंकर को स्तब्ध और दिङ्मूढ़–सा बना दिया। अब उनके समक्ष मृत्यु मानो साकार रूप धारण कर खड़ी हो गई और वे संसार की नश्वरता तथा क्षणभंगुरता का सतत चिंतन करने लगे। इसी बीच 1899 वि. में उनके एक चाचा जी का भी देहान्त हो गया जो उनसे अत्यन्त स्नेह करते थे। अब मूलशंकर का मन संसार के बंधनों से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगा, परन्तु उनके माता–पिता अपने युवा पुत्र का विवाह कर उसे सांसारिक बंधनों में और भी दृढ़ता से बाँधने का विचार करने लगे।

गृह–त्याग और संन्यास दीक्षा

1903 वि. के ज्येष्ठ मास की किसी संध्या को मूलशंकर ने चुपचाप अपने गृह और परिजनों की ममता को त्यागकर जंगल का रास्ता लिया। ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य का नाम धारण कर वे यत्र–तत्र विचरण करते रहे। एक बार सिद्धपुर के मेले में उनका पिता से पुनः साक्षात्कार हुआ जो उन्हें घर लौटाने के लिए ढूँढ़ते हुए आ गए थे। ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य पिता के समक्ष तो विनम्र भाव से उनकी आज्ञा–पालन करने तथा घर लौट–जाने के लिए तैयार हो गए, परन्तु रात्रि को पुनः अवसर पाकर भाग खड़े हुए। इसके पश्चात् उनका अपने परिवार के लोगों से कभी साक्षात्कार नहीं हुआ। कालान्तर में यही ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य एक दक्षिणी संन्यासी स्वामी पूर्णानन्द से प्रवज्या लेकर दयानन्द सरस्वती के नाम से लोक में विख्यात हुए।

उत्तराखण्ड का भ्रमण

संन्यास लेने के पश्चात् स्वामी दयानन्द ने उत्तर भारत का विस्तृत भ्रमण किया। गुजरात के विभिन्न स्थानों का पर्यटन करते हुए वे आबू पर्वत पर पहुँचे। विभिन्न योगियों से योग की शिक्षा लेते हुए तथा संस्कृत के विभिन्न शास्त्रग्रन्थों का अभ्यास करते हुए वे उत्तराखण्ड के ऊँचे पर्वतों में पहुँच गए। यहाँ हिमालय के हिम–धवल उत्तुंग शिखरों पर विचरण करते हुए स्वामी दयानन्द योगियों का अन्वेषण करते रहे। उन्हें यत्र–तत्र धर्मध्वजी पाखण्डी एवं परापजीवी साधु–वेशधारियों के तो दर्शन हुए, परन्तु परमतत्त्व का साक्षात्कार करानेवाला अलौकिक दृष्टि–सम्पन्न, आध्यात्मिक साधनायुक्त कोई पुरुष नहीं मिला। उत्तराखण्ड का भ्रमण समाप्त कर स्वामी जी गंगा–तटवर्ती प्रदेश का भ्रमण करते रहे। तदनन्तर अवधूतावस्था में वे देशाटन करते हुए नर्मदा नदी के स्रोत तक चले गए।

मथुरा–आगमन और दण्डी विरजानन्द की पाठशाला में शास्त्राभ्यास

अब उन्हें पता चला कि मथुरा में दण्डी विरजानन्द नामक एक अशेष प्रतिभा सम्पन्न संन्यासी निवास करते हैं जो बहुश्रुत एवं बहुपठित है। विद्या – लाभ की दृष्टि में कार्तिक शुक्ला द्वितीय बुधवार (14 नवम्बर 1860 ई.) को दयानन्द मथुरा आए और नियमित रूप से दण्डी जी की पाठशाला में अध्ययन करने लगे। लगभग अढ़ाई वर्षों के अध्यनकाल में उन्होंने अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त और वेदान्तादि कतिपय शास्त्र पढ़े। यहाँ उन्हें दण्डी जी से आर्ष और अनार्ष ग्रन्थों का विवेक हुआ और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि साक्षात्कृत धर्म, आप्त ज्ञानयुक्त ऋषियों द्वारा रचित ग्रन्थों तथा सामान्य अस्पदादि पुरुषों द्वारा निर्मित ग्रन्थों में महत् अन्तर होता है। अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् जब दयानन्द गुरु–दक्षिणा के रूप में विरजानन्द के समक्ष उनके प्रिय पदार्थ लोगों का एक थाल भरकर भेंट के रूप में अर्पित कने के लिए उपस्थित हुए तो गुरु ने अपने इस प्रिय अन्तेवासी से एक विचित्र, किन्तु महत्वपूर्ण दक्षिणा माँगी। विरजानन्द ने कहा – "इस समय देश में अज्ञान और अविद्याजन्य अन्धकार फैला हुआ है, इसे दूर करने तथा शताब्दियों से विलुप्त वैदिक धर्म को पनुः स्थापित करने की आवश्यकता है।" उन्होंने दयानन्द से वचन लिया कि वे भविष्य में अपने शेष जीवन को लोकहितार्थ में अर्पित कर देंगे तथा संसार के अज्ञानान्धकार को दूर करने तथा आप्त ज्ञान का प्रचार कर साम्प्रदायिक मतों के जाल से देशवासियों को मुक्त करेंगे। इसके पश्चात् वे वैदिक धर्म के पुनरुत्थान का महामंत्र लेकर कर्म क्षेत्र में अवतीर्ण हुए।

कर्मक्षेत्र में अवतरण

अब से स्वामी दयानन्द का क्रियाशील धर्म–प्रचारक, क्रान्तिकारी समाज–सुधारक तथा युगान्तरकारी विचारक जीवन आरम्भ होता है। पर्याप्त दिनों तक वे अपनी कार्य प्रणाली का चिन्तन करते रहे। अभीष्ट–सिद्धि के लिए कौन–से उपाय स्वीकार किए जाएँ यह उनके लिए मीमांसा का विषय बन गया। आगरा–प्रवासकाल में जब उनके शिष्य एवं भक्तवर्ग ने जिज्ञासा की कि वे अपने गुरुदेव द्वारा दिए गए आदेशों की पूर्ति किस प्रकार करेंगे, तो दयानन्द का यही उत्तर था कि मैं सोच रहा हूँ। वस्तुतः वे पथ के अन्वेषी बने हुए थे। प्रारम्भ में उन्होंने आर्ष ग्रन्थों के कथा–प्रवचन, जन–समाज में सन्ध्योपासना, गायत्री–जप आदि के प्रचलन के द्वारा धार्मिक जागरण करना चाहा। अतः वे कौपीन मात्र धारण कर केवल संस्कृत बोलने का व्रत लेकर गंगा–तटवर्ती प्रान्तों का भ्रमण करते रहे। इस विस्तृत देशाटन ने उनके समक्ष धर्म, समाज और राष्ट्र के बहुविधा पतन की एक यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की। उन्होंने अनुभव किया कि पाखण्ड, ढोंग, आडम्बर तथा मिथ्याचारों से देशवासी त्रस्त हैं। साम्प्रदायिक विभ्राट् ने हिन्दू समाज को सर्वतोमुखी पतन की ओर ढकेल दिया है। विभिन्न मत–मतान्तरों की संकीर्ण काराओं में अपने–आपको स्वतः ही आबद्ध कर भारतीय जनसमाज मूढ़त, कूपमण्डूकता तथा गतानुगतिकता के क्रूर पाश में बँध गए हैं। फलतः 1867 के कुम्भ मेले के अवसर पर हरिद्वार में जाकर उन्होंने 'पाखण्ड खण्डिनी पताका' लहराई और धर्म एवं समाज में व्याप्त कुसंस्कारों और मूढ़ विश्वासों का तार–स्वर से खण्डन करने लगे। यद्यपि स्वामी जी धीरे–धीरे अपने भावी कार्यक्रम को सुनिश्चित करने की ओर अग्रसर हो रहे थे, तथापि इस क्षण उन्हें यह अनुभव हुआ कि सर्वसंग–परित्यागी परिव्राजक बने बिना उनके कथन की ओर लोगों का ध्यान नहीं जाएगा। अतः उन्होंने 'सर्वमेध यज्ञ' करने का निश्चय किया। वस्त्र, पुस्तक आदि के परिग्रह को भी त्यागकर मात्र कौपीन ही शरीर पर रखा।

इसके पश्चात् वे देश के विभिन्न भागों में धर्म–प्रचार करते, कुरीतियों, कुसंस्कारों तथा मिथ्या आचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाते हुए भ्रमण करते रहे। स्थान–स्थान पर साम्प्रदायिक निवेशी पण्डितों, हिन्दू–धर्मेत्तर मतों के मुल्लामौलवियों तथा पादरियों से उनके शास्त्रार्थ हुए। विभिन्न स्थानों पर अपने भाषणों, शंका–समाधान एवं विचार–विमर्श द्वारा जनता को उद्बोधन देते हुए वे अपने मन्तव्यों का प्रचार करते रहे। स्वामी जी की कार्य–प्रणाली पर विचार करने से ज्ञात होता है कि वे आरम्भ में संस्कृत, आर्षशास्त्र की पाठशालाएँ स्थापित कर उनके माध्यम से हिन्दू समाज में, वैचारिक–क्रान्ति लाना चाहते थे। दण्डी विरजानन्द से उन्हें आर्ष–अनार्ष–विवेक

का जो मूल मंत्र प्राप्त हुआ था, उसका प्रसार आर्ष ज्ञान के प्रचार से ही संभव था। अतः वैदिक शास्त्रों की पाठशालाएँ स्थापित करना उन्हें अभीष्ट जान पड़ा। काशी, फरूखाबाद, कासगंज आदि स्थानों में उन्होंने ऐसे विद्यालय स्थापित किए। इन पाठशालाओं की पाठविधि, छात्रों के अध्यन के नियम, अन्तरवासियों के आचार–व्यवहार और अनुशासन के नियम भी उन्होंने स्वतः ही बनाए, परन्तु कालान्तर में उन्हें अनुभव हुआ कि योग्य अध्यापकों की कमी तथा आर्ष ग्रन्थों के पठन में छात्रों की रुचि न होने के कारण इन पाठशालाओं की सफलता संदिग्ध है। स्वामी जी अध्यापकों में जिन गुणों की अपेक्षा रखते थे, उस प्रकार के योग्य उपाध्याओं का नितान्त अभाव था। अधिकांश पण्डित अध्यापक स्वामी जी की विचारधारा के प्रतिकूल तथा पौराणिक संस्कारों से आक्रान्त थे, अतः उनका वैदिक पद्धति के अनुसार संचालित होने वाली पाठशालाओं से तालमेल होना कठिन था। परिणामस्वरूप स्वामी जी को इन पाठशालाओं को बन्द कर देना पड़ा। दयानन्द अनुपयोगी कार्यक्रम को चलाना निरर्थक समझते थे।

16 नवम्बर 1869 को भारत की सांस्कृतिक राजधानी काशी में स्वामी दयानन्द का मूर्तिपूजा–समर्थक पण्डित–समुदाय से शास्त्रार्थ हुआ। स्वामी जी की यह धारणा थी कि यदि शास्त्रीय आधार पर वे मूर्तिपूजा, अवतारवाद, तीर्थ, व्रत, तिलक–मालादि साम्प्रदायिक धारणाओं का खण्डन करने में सफल हो जाएँगे तो संस्कृति की विद्वत्मण्डली उनके साथ अपनी वैचारिक सहमति प्रदान कर देगी तथा धर्म–संशोधन का उनका काम अधिक सरल हो जाएगा। परन्तु काशी के विद्वानों के रूख को देखकर उनकी निराशा की सीमा नहीं रही। काशी–नरेश से वृत्ति प्राप्त संचालित अन्य क्षेत्र से प्राप्त आजीविका–भोगी पंडित–मण्डली दयानन्द की क्रान्तिदर्शिता का पालन नहीं किया गया तो पुराणानुमोदित, परम्परागत धर्म और मान्यताएँ रसातल को चली जाएँगी। इसके अनन्तर स्वामी जी कलकत्ता गए। यहाँ उन्हें बंगाल के कतिपय उन शीर्षस्थ सुधारकों का सान्निध्य प्राप्त हुआ जो उस समय धर्म, समाज तथा शिक्षा के क्षेत्र में सुधार एवं संस्कार के कार्यों में संलग्न थे। ब्रह्मसमाज के वयोवृद्ध नेता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने उन्हें कलकत्ता में आने के लिए आमंत्रित किया था। यहाँ आने पर ठाकुर महाशय के अतिरिक्त केशवचन्द्र सेन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजनारायण वु, भूदेव मुखोपाध्याय आदि प्रमुख सुधारकों, शिक्षाविदों एवं बंगीय नवजागरण के अग्रगन्ता पुरुषों से उनकी भेंट हुई। यहाँ उन्हें ब्रह्मसमाज के सिद्धान्तों, मन्तव्यों तथा कार्यप्रणाली का निकट से अध्ययन करने का अवसर मिला। केशवचन्द्र सेन ने उन्हें लोकभाषा में अपने विचार व्यक्त करने की प्रेरणा दी, जिसे स्वामी जी ने उन्मुक्त भाव से स्वीकार किया। साथ ही वे सेन महाशय के इस व्यावहारिक परामर्श से भी सहमत थे कि विशाल जन–समूह के सम्मुख उपस्थित होते समय वे मात्र कौपीनधारी न रहकर, सर्वांगीण वस्त्रों को धारण किया करें। किसी सुव्यवस्थित संगठन के माध्यम से वे अपने कार्य को अधिकाधिक बलपूर्वक संचालित कर सकते हैं – यह धारणा कलकत्ता–प्रवासकाल में बन गई, यद्यपि इस मूर्त स्वरूप प्रदान करने का अवसर उन्हें बम्बई में मिला। फिर भी स्वामी दयानन्द किसी नवीन संस्था को जन्म देने के लिए अधिक उत्सुक नहीं थे। ब्रह्मसमाज के कार्यों और प्रवृत्तियों के प्रति उनके हृदय में पर्याप्त सदाशयता और सद्भावना थी, परन्तु जब उन्होंने यह अनुभव किया कि वेद को प्रामाणिक धर्मग्रन्थ न मानकर कुरान, बाईबल आदि आर्येतर मतों के मान्य ग्रन्थों को भी उनके समकक्ष रखना, पुनर्जन्म जैसे सर्वधर्म–सम्मत विश्वास के प्रति अनास्था, यज्ञ, उपनयन आदि निर्दोष कर्मकाण्डों का तिरस्कार तथा ईसाईयत के प्रति अनावश्यक आकर्षण ब्रह्मसमाज की मान्यता के अभिन्न अंग बन गए हैं, तो उन्हें ब्रह्मसमाज से देशोद्धार की आशा नहीं रही। कलकत्ता का प्रवास समाप्त कर दूसरे ही वर्ष वे देश के अन्य महानगर बंबई पहुँचे। कलकत्ते की ही भाँति यहाँ भी महाराष्ट्र के प्रबुद्ध संस्कारकगण उनके सम्पर्क में आए। श्री महादेव गोविन्द रानाडे, डॉ. रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर, शंकर पाण्डुरंग, विष्णु शास्त्री चिपलूणकर, गोपालराव हरिदेशमुख आदि ने स्वामी दयानन्द के रूप में पौरस्त्य ज्ञान एवं विद्या की एक ऐसी प्रज्वलित ज्योति के दर्शन जो अपने भीतर आध्यात्मिक साधना से उत्पन्न असीम शक्ति को संनिविष्ट किए होने पर भी, लोकमंगल तथा मानव–जाति के व्यापक हित के लिए एक विचित्र तड़प लिए हुए थे।

आर्य समाज की स्थापना

अपने इन्हीं बंबई निवासी भक्तों एवं अनुयायियों के विनय किन्तु भावना प्रवण आग्रह को स्वीकार कर स्वामी जी ने एक ऐसा संगठन स्थापित करने की इच्छा व्यक्त की जो न केवल वैदिक धर्म और आर्य संस्कृति के पुनरुत्थान हेतु ही प्रयत्नशील हो, अपितु जिसके माध्यम से प्राणिमात्र का हित साधन हो सके। लोककल्याण के इसी व्यापक आदर्श को दृष्टिपथ में रखकर चैत्र शुक्ला पंचमी सं. 1932 को आर्य समाज की स्थापना की गई। इसका प्रथम अधिवेशन चैत्र शुक्ला पंचमी को गिरगाँव स्थित डॉ. माणेक जी पारसी की वाटिका में हुआ। समाज के सिद्धांतों और विधान को 28 नियमों में निबद्ध किया गया। रानाडे, देशमुख, सेवकलाल, कृष्णदास, पानाचन्द आनन्द जी पारेख, गिरधरलाल, दयालदास कोठारी आदि गणमान्य प्रतिष्ठित पुरुष–आर्यसमाज के सदस्य एवं सहायक थे। 1875 से 1877 तक देश के अन्य भागों में भी स्वामी जी यथापूर्व भ्रमण करते रहे। संभवतः वे इस बीच मौन भाव से आर्य समाज के पुष्पित, पल्लवित एवं वृद्धिगत होने की संभावनाओं का अध्ययन कर रहे थे। धर्म, समाज और राष्ट्र के सर्वांगीण सुधार का जो बिरवा उन्होंने बंबई में रोपा, उसे किस प्रदेश का जलवायु रास आएगा और भारतभूमि के किस अनुराग की उर्वरा भूमि इस पौधे को सशक्त बनाने में समर्थ होगी। यह विचार करते–करते स्वामी जी पंजाब की राजधानी लाहौर आए। यद्यपि उन्हें लाहौर में आमंत्रित करनेवाले लोग अधिकांश में ब्रह्मसमाजी थे जिनके साथ स्वामी जी की शत–प्रतिशत वैचारिक सहमति नहीं थी, परन्तु यहाँ के स्वल्प प्रवास–काल में ही उन्होंने यह समझ लिया कि पंजाब निवासियों में न तो रूढ़िवादिता के प्रति मोह है और न वे पुरातन विचारों और संस्कारों की श्रृंखलाओं से ही पूर्णतया जकड़े हुए हैं। हृदय की विशालता, नवीन विचारों को तत्परता के साथ ग्रहण करने की प्रवृति उन्हें पंजाबी स्वभाव की विशेषता प्रतीत हुई। फलतः जब 24 जून 1877 को लाहौर में आर्य समाज की स्थापना हुई तो उनको यह विश्वास हो गया कि आर्य समाज की उन्नति एवं प्रगति सुनिश्चित है तथा समवान्नर में आर्यसमाज रूपी महावृक्ष की शीतल छाया के नीचे आकर ही विश्व मानवता, शान्ति, सौहार्द तथा स्वतंत्रता का अनुभव करेगा। लाहौर में उन्हें रा. ब. मूलराज तथा लाला साईंदास जैसे कर्मठ सहयोगी मिले। यहीं पर आर्य समाज के नियमों एवं उद्देश्यों को उसके विधान से पृथक किया गया तथा संगठन संबंधी वैधानिक धाराओं को उपनियमों के रूप में निर्धारित किया गया।

स्वामी जी के जीवन का अवशिष्ट समय उनकी उदात्त एवं महनीय शिक्षाओं सर्वाधिक प्रसाद का काल था। आर्य समाज की शाखाएँ जिस तीव्र गति के साथ पंजाब, पश्चिमोतर प्रदेश (वर्तमान उतर प्रदेश), राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र में फैलने लगीं, उससे यह सहज ही विश्वास हो गया कि आर्य समाज के रूप में जिस महाप्राण आन्दोलन ने जन्म लिया है उससे मानवता के ऋण की निश्चित आशा बँधी है। इसी दृढ़ आत्मविश्वास को लेकर दयानन्द अपने जीवन के अवशिष्ट समय में वेदभाष्य–प्रणयन तथा अन्य ग्रन्थों के लेखन की ओर प्रवृत्त हुए। वे सोचते थे कि यदि वैदिक विचारधारा के पुनः प्रसार से देश के विगत गौरवपूर्ण अतीत की कतिपय उपलब्धियों को फिर से प्राप्त किया जा सकता है तो यह और भी आवश्यक है कि वेदों का वास्तविक अभिप्राय जन–समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया जाए। फलतः वैदिक साहित्य का पुनरावलोकन तथा वेदार्थ का इस नए संदर्भ में मूल्यांकन आवश्यक था।

देश–सुधार की एक अन्य योजना भी उनके सम्मुख आई उनकी यह प्रेरणा थी कि यद्यपि समस्त भारत वर्ष अंग्रेज़ी दासता को कारा में बंद है तथापि जो थोड़े से देशी राज्य हैं उनमें स्वदेश नरेशों को किञ्चित् स्वधीनता प्राप्त है। यदि ये क्षत्रिय राजा सुधर जाएँ तो उनकी प्रजा का सुधार और अभ्युत्थान भी संभव है। इसी दृष्टिकोण को लेकर स्वामी जी अपने जीवन के संध्याकाल में उदयपुर, शाहपुरा तथा जोधपुर के राजघरानों के संपर्क में आए तथा राजपुरुषों को दुर्व्यसन–त्याग, प्रजा–पालन तथा देशसेवा का उपदेश देने में प्रवृत्त हुए। शतशः लोग उनके अनुयायी बने, सहस्रों लोगों ने उनका स्फूर्तियुक्त उपदेश सुना। इस प्रकार आर्य समाज की स्थापना के पश्चात् मात्र 8 वर्ष तक ही प्रचार क्षेत्र में लगे रहकर स्वामी दयानन्द एक भयंकर षड्यंत्र के शिकार हुए। कार्तिक अमावस्या सं. 1940 वि. को अजमेर में 59 वर्ष की अवस्था में उन्होंने मृत्युंजय पद प्राप्त किया। स्वामी दयानन्द के रूप में देश ने एक महान् कर्मवीर, वीतराग साधक तथा लोकमंगल के विधाता महापुरुष के दर्शन किए।

उपर्युक्त पंक्तियों में आर्यसमाज के प्रवर्तक के जीवन और कार्यों की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। हम यह देख चुके हैं कि आर्य समाज की स्थापना स्वामी दयानन्द के जीवन की एक अविस्मरणीय घटना है। ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी में विज्ञान और बुद्धिवाद के आधार पर पुरातन आर्य धर्म और भारतीय संस्कृति की मान्यताओं का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए जिन सुधार–आन्दोलनों का भारत में जन्म हुआ, उनमें आर्य समाज–स्थापना से पूर्व बंगाल में ब्रह्मसमाज तथा महाराष्ट्र में प्रार्थनासमाज के द्वारा नवयुग के आगमन का दिशा–निर्देश किया जा चुका था। देशवासियों को पश्चिम के ज्ञान–विज्ञान के आलोक में अपने सिद्धान्तों और मान्यताओं की पुनरालोचना करने के लिए कहा जा रहा था। स्वामी दयानन्द द्वारा आर्यसमाज की स्थापना भी इसी कार्य को करने का महत्वपूर्ण प्रयास था। प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि ब्रह्मसमाज आदि संस्थाएँ राष्ट्र के नवजागरण के कार्य में पहले से ही रत थी, तब एक नवीन संगठन की क्या आवश्यकता थी? क्या स्वामी जी ब्रह्मसमाज में ही सम्मिलित होकर उसके कार्य को गति देते हुए अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर सकते थे?

प्रस्तुतकर्ता डॉ. गौर मोहन माथुर
3/5, शंकर कालोनी
श्रीगंगानगर – 335001 (राज.)
दूरभाषः 0154–2466299

गदर पार्टी के पं. परमानन्द

● डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

भारत को अंग्रेजी दासता से मुक्त कराने को क्रान्तिकारियों ने अपने जीवन, अपने परिवार की भी चिन्ता नहीं की। वह जब भी सोते उठते सोचते थे कि देश स्वतन्त्र कैसे हो अपनी मातृभूमि की रक्षा हेतु वे योजनाएँ ही नहीं बनाते थे अपितु पालन भी करते थे।

ऐसे ही थे पंडित परमानंन्द जिनका जन्म जून माह में सन् 1892 में ग्राम सिकरोधा तहसील राठ जिला हमीरपुर उत्तर प्रदेश में हुआ था। पंडित परमानन्द विद्यार्थी जीवन से ही क्रान्तिकारी गतिविधियों में सम्मिलित हो गए थे सिंगापुर जापान होते हुए अमेरिका चले गये थे वहाँ गदर पार्टी के संगठन में शामिल हो गए। उस समय गदर पार्टी भारत को अंग्रेजों से मुक्त कराने हेतु भारतीय सेना को बगावत करने के लिए तैयारी कर रही थी गदर पार्टी अर्थात क्रान्तिकारी कोरिया नामक जहाज से चल पड़े। परमानन्द इनके साथ थे हांग कांग में। इन्होंने गदर पार्टी का प्रचार किया। उद्देश्य सेना व भारतीयों द्वारा गदर करना था गुरुद्वारों में सभाएँ की गई हांग कांग की पंजाबी पलटनों को भड़काने की कोशिश की गई। गदर अखबार व पुस्तके भी प्रचारित की गई गदर क्रान्तिकारी तोशामारु जहाज से भारत के कलकत्ता में पहुँचने ही वाले थे अंग्रेज सरकार को इसकी सूचना मिल गई। गोरे व गोरखे सिपाही इस जहाज़ पर सबकी छानबीन करने लगे इस समय भारतीयों को गिरफ्तार किया जा रहा था। पं. परमानन्द ने बच निकलने का उपाय निकाला क्योंकि पं. परमानन्द के पास भारत में अंग्रेजी सरकार के पैर उखाड़ने हेतु महत्वपूर्ण कागज नक्शे आदि थे उन्होंने बच निकलने की युक्ति सोची। उन्होंने रंगून से आने वाले उत्तर प्रदेश के कुलियों को देखा बस फिर क्या था पं. परमानन्द ने इन कुलियों जैसा वेश बना लिया और एक बाल्टी हाथ में ले कुलियों के मध्य ही खड़े हो गए सिपाहियों के पूछने पर बताया कि रंगून से आया हूँ जब पूछा कि वहाँ क्या करते हो तब बताया कि वहाँ स्टेशन मास्टर का खाना बनाता था। सिपाहियों ने यू.पी. का कुली जान जहाज से बाहर उतार दिया। इनके समस्त साथी गिरफ्तार हो गए थे यही एक मात्र थे जो अंग्रेज पुलिस को चकमा देकर निकल गए और गिरफ्तारी से बच गए। गदर हेतु जो महत्वपूर्ण दस्तावेज थे बूटों में मोजों में रखे थे बचा लिए थे।

ऐसे थे पं. परमानन्द। देश के लिए उन्होंने उन कागज व महत्व पूर्णसामग्री को बचा लिया। कलकता से लाहौर आ गए लाहौर उस समय क्रान्तिकारियों का महत्वपूर्ण केन्द्र था। इन कागजों में 21 छावनियाँ व 22 पुल रेखांकित थे अंग्रेजी सेना की छावनियों का सम्बन्ध रेल लाइने उखाड़ कर अवरूद्ध करना था पुल मार्ग तोड़ना व यातायात व्यवस्था बिगाड़नी थी, टेलीफोन सेवा ध्वस्त करनी थी। गदर की तारीख 21 फरवरी 1915 निश्चित की थी। लाहौर के पास मियांमीर की छावनी में सेना का विशाल शस्त्रागार था जिसे क्रान्तिकारियों द्वारा लूटना था, तोपखाने के गोरे सिपाहियों को मारना था। ऐसी योजना क्रान्तिकारियों की थी और इस हेतु महत्वपूर्ण दस्तावेजों को पं. परमानन्द अंग्रेज सिपाहियों की आँखों में धूल झौंक कर तोशा मारू जहाज से बाहर कलकता आ गए थे। इनकी बुद्धिमत्ता से यह महत्वपूर्ण दस्तावेज अंग्रेजों के हाथ पड़ने से बच गए।

क्रान्तिकारियों का पूरा इतिहास व जीवन व्रत भारत के समस्त विद्यालयों में पढ़ाया जाना चाहिए देश प्रेम व चरित्र निर्माण हेतु भारतीय क्रन्ति के इतिहास का ज्ञान आज की पीढ़ी हेतु अति आवश्यक है। हमारे पूर्वज कितने जागरूक व देशभक्त थे इसकी शिक्षा मिलती है। इसके लिए आर्यसमाज का इतिहास (डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार) अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

गली नं. 2, चन्द्र लोक कालोनी
खुरजा 203131

अल्लोपनिषद् की वास्तविकता

● भावेश मेरजा

जिन दिनों महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संशोधित संस्करण के सम्पादन–प्रकाशन कार्य में व्यस्त थे, उन दिनों कलकत्ता से निकलने वाले 'भारत मित्र' नामक एक पत्र के श्रावण 6 गुरुवार वि. सं. 1940 के अंक में छपा था कि मुसलमानों के मजहब का मूल अथर्ववेद में है और इस सम्बन्ध में अल्लोपनिषद् का उल्लेख भी किया गया था।

यह समाचार पढ़कर महर्षि ने उक्त पत्र के सम्पादक को एक पत्र लिखा। महर्षि का यह पत्र 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' में पढ़ा जा सकता है (पृ. 447–448, द्वितीय संस्करण)।

इसीलिए सत्यार्थ प्रकाश के कुरआन की समीक्षा विषयक 14वें समुल्लास के अन्त में महर्षि ने अल्लोपनिषद् की वास्तविकता प्रकट करने के लिए अपने निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं –

''अब एक बात यह शेष है कि बहुत से मुसलमान ऐसा कहा करते और लिखा वा छपवाया करते हैं [यह संकेत भारत मित्र के उपर्युक्त लेख की ओर है] कि हमारे मजहब की बात अथर्ववेद में लिखी है। इसका यह उत्तर है कि अथर्ववेद में इस बात का नाम निशान भी नहीं है।

(प्रश्न) क्या तुमने सब अथर्ववेद देखा है? यदि देखा है तो अल्लोपनिषद् देखो। यह साक्षात् उसमें लिखी है। फिर क्यों कहते हो कि अथर्ववेद में मुसलमानों का नाम निशान भी नहीं है? 'अथाल्लोपनिषदं व्याख्यास्यामः... इत्यल्लोपनिषत् समाप्ताई' जो इसमें प्रत्यक्ष मुहम्मद साहब रसूल लिखा है इससे सिद्ध होता है कि मुसलमानों का मत वेदमूलक है।

(उत्तर) यदि तुमने अथर्ववेद न देखा हो तो हमारे पास आओ, आदि से पूर्ति तक देखो अथवा जिस किसी अथर्ववेदी के पास बीस काण्डयुक्त मन्त्रसंहिता अथर्ववेद को देख लो। कहीं तुम्हारे पैगम्बर साहब का नाम वा मत का निशान न देखोगे और जो यह अल्लोपनिषद् है वह न अथर्ववेद में, न उसके गोपथ ब्राह्मण वा किसी शाखा में है। यह तो अकबरशाह के समय में अनुमान है कि किसी ने बनाई है। इस का बनाने वाला कुछ अर्बी और कुछ संस्कृत भी पढ़ा हुआ दीखता है क्योंकि इसमें अरबी और संस्कृत के पद लिखे हुए दीखते हैं। देखो! (अस्माल्लां इल्ले मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते) इत्यादि में जो कि दश अंक में लिखा है, जैसे – इस में (अस्माल्लां और इल्ले) अर्बी और (मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते) यह संस्कृत पद लिखे हैं वैसे ही सर्वत्र देखने में आने से किसी संस्कृत और अर्बी के पढ़े हुए ने बनाई है। यदि इसका अर्थ देखा जाता है तो यह कृत्रिम अयुक्त वेद और व्याकरण रीति से विरुद्ध है। जैसी यह उपनिषद् बनाई है, वैसी बहुत सी उपनिषदें मतमतान्तर वाले पक्षपातियों ने बना ली हैं। जैसी कि स्वरोपनिषद्, नृसिंहतापनी, रामतापनी, गोपालतापनी बहुत–सी बना ली हैं।

(प्रश्न) आज तक किसी ने ऐसा नहीं कहा, अब तुम कहते हो। हम तुम्हारी बात कैसे मानें?

(उत्तर) तुम्हारे मानने वा न मानने से हमारी बात झूठ नहीं हो सकती है। जिस प्रकार से मैंने इसको अयुक्त ठहराया है उसी प्रकार से जब तुम अथर्ववेद, गोपथ वा इसकी शाखाओं से प्राचीन लिखित पुस्तकों में जैसे का तैसा लेख दिखलाओ और अर्थसंगति से भी शुद्ध करो तब तो सप्रमाण हो सकता है।''

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश का 'सत्यार्थ भास्कर' नामक दो भागों में विस्तृत भाष्य लिखा है। उसमें उन्होंने अल्लोपनिषद् के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें लिखीं हैं –

अल्लोपनिषद् : इस विषय में अभी तक भी भ्रान्ति बनी हुई है। सन् 1947 के मई मास में महात्मा गाँधी दिल्ली में ठहरे हुए थे। उनकी प्रार्थना में वेद, उपनिषद्, गीता, बाइबल आदि के अंश नियमित रूप से बोले जाते थे। कुछ लोगों को यह अच्छा नहीं लगता था। गाँधीजी तक भी यह बात पहुँची। तब एक दिन उन्होंने प्रार्थनोपरान्त प्रवचन में कहा – 'हिन्दू लोग मेरी प्रार्थना में कुरान शरीफ की आयतों के पढ़े जाने पर क्यों आपत्ति करते हैं, जबकि उनकी उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है।' इस पर मैंने गाँधीजी को भेजे अपने एक पत्र में लिखा – 'आपका यह कहना ठीक नहीं है कि हिन्दुओं द्वारा मान्य उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है। मेरे पास वर्तमान में उपलब्ध सभी 108 उपनिषदें हैं। उनमें अल्लोपनिषद् नाम की कोई उपनिषद् नहीं है। उसका अता–पता देने की कृपा करें।' गाँधीजी ने उत्तर में लिखा – 'मुझे मेरे एक मित्र ने बताया था कि उसने किसी पुस्तक की भूमिका में लेखक द्वारा उधृत प्रमाण के आधार पर ऐसा कहा था।' मैंने प्रत्युत्तर में गाँधीजी को लिखा कि – 'आप जैसे महापुरुष को, जिनकी वाणी या लेखनी से निकला हुआ एक–एक शब्द महत्त्वपूर्ण होता है, सुनी–सुनाई बातों के आधार पर ऐसा वक्तव्य नहीं देना चाहिए। अब मैं आपको अल्लोपनिषद् की जानकारी देता हूँ। आप जानते हैं कि मुगल सम्राट् अकबर ने अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए 'दीने इलाही' के नाम से एक मत चलाया था। प्रत्येक मत का एक धर्मग्रन्थ भी होता है। अल्लोपनिषद् अकबर द्वारा बनवाए गए ऐसे ही धर्मग्रन्थ का नाम है। अरबी और संस्कृत मिश्रित भाषा में रचित इस ग्रन्थ में अल्ला, ब्रह्म, ऋषि, मुहम्मद, अकबर, अथर्व, उपनिषद्, यज्ञ, अन्तरिक्ष, माया आदि शब्दों को देखकर आपाततः इसके हिन्दुओं और मुसलमानों में समानरूप से मान्य धर्मग्रन्थ होने का भ्रम हो सकता है, किन्तु वास्तव में इसका वेद, उपनिषद् आदि से कोई सम्बन्ध नहीं है।' (सत्यार्थ–भास्कर, भाग–2, पृ. 795–6)

ऐसे किया था आर्य विद्वान् पण्डित लक्ष्मीदत्त दीक्षित (बाद में स्वामी विद्यानन्द सरस्वती) ने अल्लोपनिषद् विषयक गांधीजी के भ्रम को दूर करने का प्रयास !

8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,
जि. भरूच (गुजरात) – 392015,
मो. 9879528247

दिव्य मन

● यश वर्मा

ओ३म् वयं सोम व्रते तव
मनस्तनूषु बिभ्रतः।
प्रजावन्तः सचेमहि।।

यह ऋग्वेद का मन्त्र है जिसका अर्थ है :— हे सोमदेव, हे प्रभु, अपने शरीरों में मन को, मनः शक्ति को धारण किए हुए लोग तुम्हारे व्रत में है, तुम्हारे व्रत का पालन करते हैं और प्रजा सहित तुम्हारी सेवा करते रहें।

आइए आज हम इस मन्त्र पर चिन्तन मनन करते हैं। मन प्रभु के द्वारा दी गई अनमोल देन है जो हमारे लिए अमूल्य निधि है। इस मन के कारण ही हम मनुष्य हैं। मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो मननशील है। मनन करने के कारण ही मनुष्य पशुओं आदि से ऊँचा है। अतएव मनुष्य ही कह सकता है कि हे प्रभु, हम मन को धारण किए हुए लोग तुम्हारे व्रतों का पालन करेंगे। व्रतों का पालन कठिन तो है परन्तु असम्भव नहीं है। असम्भव होता तो कोई भी इस सृष्टि में व्रतों और नियमों का पालन न कर पाता। व्रत हैं, अहिंसा – सत्य – अस्तेय – ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह और साथ ही पाँच नियम हैं शौच – संतोष – तप – स्वाध्याय – ईश्वर प्रणिधान। यह सब जीवन जीने की सही पद्धति है, जो हमें योग दर्शन के ऋषि ने दी है। जो मनुष्य प्रलोभन के वश होकर व विपत्ति के समय भी अपने व्रत व नियम नहीं तोड़ते हैं, वे ही महान बनते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि व्रतों व नियमों का पालन किस लिए किया जाए, तो उत्तर मिलता है, प्रभु की सेवा के लिए और उसके बनाए पंचभूत जल, वायु, पृथ्वी, अग्नि, आकाश की सेवा। प्राणी मात्र की सेवा तो चलो समझ आती है दान, दया, परोपकार, कर्त्तव्य पालन आदि, से हम कर सकते हैं परन्तु पंचभूत की सेवा कैसे करें। जल, वायु, पृथ्वी आदि को प्रदूषित न करना ही उनकी सेवा है। अग्निहोत्र करें, वृक्षारोपण करें, पृथ्वी में जल में कैमीकल्स न डालें। कई प्रकार के साधान हैं प्रदूषण रोकने के। ये सब प्रभु की सेवा है।

मन्त्र कहता है **प्रजावन्तः सचेमहि**, अर्थात् मन की प्रजा भी सेवा में हो। अब मन की प्रजा कहाँ से आ गई। मन के बारे में तो हम सुनते आए हैं परन्तु मन की प्रजा भी है यह तो कभी सुना ही नहीं, इसके बारे में तो हमें पता ही नहीं। मन की प्रजा होती है रचना शक्ति। कुछ क्रिएटिव करना ही मन की प्रजा है। ग्रंथ, भजन, लेख–उपदेश, रिसर्च अविष्कार, परोपकार आदि जो भी ऐसे कार्य है सब मन की प्रजा हैं। ये सब प्रभावशाली तभी होगा जब ऐसा करने वाले व्यक्ति के जीवन में कुछ व्रतों व नियमों का पालन होगा। ऋषि–मुनि दर्शन शास्त्र, उपनिषद् आदि के द्वारा, वैज्ञानिक अविष्कारों द्वारा, लेखक अपने लेखों व भजनों द्वारा, व्यक्ति अपने कर्तव्य को निष्ठा व ईमानदारी द्वारा, प्रभु की सेवा करते रहते हैं। मनुष्य जाति का पथ प्रदर्शन ही प्रभु सेवा है। ये सभी कार्य मन की शक्ति से सम्प्रन्न होते हैं। मन जो है वह सदैव आत्मा के साथ रहता है जब तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो जाती। मनुष्य हो चाहे पशु पक्षी हों, मन सदा आत्मा के साथ होता ही है। एक दृष्टांत है कि मन में कैसे शक्ति भरी हुई है बस उसे जागृत करना है। एक राजा था। उसने बहुत युद्ध किए व विजय प्राप्त की। उसका एक बहुत ही प्रिय हाथी था, जिसने सभी युद्धों में बढ़–चढ़कर भाग लिया व सदैव दुश्मन के विनाश का कारण बना। समय के साथ–साथ हाथी बूढ़ा हो गया। एक दिन राजा का वह हाथी कहीं पर घूमने गया व कीचड़ में फँस गया। थोड़ा प्रयत्न किया कीचड़ से बाहर आने का परन्तु निकल न पाया। कुछ लोगों ने देखा तो हाथी के बारे में राजा को सूचित किया। कुछ सैनिक आए उसे निकालने के लिए और कहने लगे, इसे रस्सियों से बांधकर निकाला जा सकता है। इतने में राजा का मन्त्री आ गया। मन्त्री ने कहा, यह हाथी बूढ़ा है, रस्सी से तो इसकी खाल छिल जाएगी। फिर मन्त्री ने एक आईडिया दिया कि यह हाथी बहुत सारे युद्धों में भाग ले चुका है, यदि युद्ध जैसी स्थिति बना दी जाए तो यह हाथी मन की दिव्य शक्ति जागृत होने से कीचड़ से बाहर आ सकता है। अब यह राजा का प्रिय हाथी था। कुछ सैनिक कुछ घुड़सवार, कुछ अन्य हाथी, ढोल नगाड़े मृदंग बाजे बजाते हुए, बिल्कुल युद्ध की स्थिति बना दी गई। उस हाथी ने एक ज़ोरदार चिंघाड भरी, एकदम से ज़ोर लगाकर खड़ा हुआ और धीरे–धीरे उस कीचड़ से बाहर आ गया। यह सम्भव हो पाया उसके मन की शक्ति जागृत हो जाने से।

हम सबके पास कोई न कोई कला, ज्ञान, विज्ञान, शक्ति छिपी हुई बैठी है बस उसे जागृत करना है। एक और दृष्टांत है कि एक माता जी को अधरंग हो गया। छः मास तक इलाज चलता रहा। डॉक्टर ने टैस्ट किए व कहा कि माता जी अब ठीक हैं। माता जी कहें कि मैं ठीक नहीं हूँ, मैं नहीं उठ सकती। कई दिन बीत गए। उनके परिवार ने सोचा क्यों न किसी संत महात्मा से बात की जाए। परिवार ने एक महात्मा जी से बात कर सारी स्थिति बता दी। महात्मा जी सब समझ गए और कहा कल प्रातः 10 बजे माता जी को ले आना, वह ठीक हो जाएँगी। परिवार के कुछ सदस्य माता जी को लेकर महात्मा जी के आश्रम पहुँचे। महात्मा जी ने लगभग 50 गज़ दूर माता जी को व्हील चेयर पर बैठा दिया और परिवार को कहा कि आप माता जी से 100 गज़ दूर जाकर खड़े हो जाएँ। महात्माजी ने कुछ मन्त्र पढ़ा और एक कमरे का दरवाज़ा खोल दिया जिसमें से 17 कुत्ते निकलकर माता जी की ओर दौड़े। माता जी ने देखा कि यह कुत्ते तो मुझे जीवित नहीं छोड़ेंगे। वह उठकर अपने परिवार की ओर भागी। यह कैसे सम्भव हो पाया? माता जी की मन की दिव्य शक्ति जो सुषुप्ति में थी, जागृत हो उठी।

इसलिए वेद कहता है कि अपने मन को जगाओ और मृत्यु के पैर को धकेल दो। अमर हो जाओ, अमर पुत्र बनो। लेकिन हम अमर कैसे हो सकते हैं, शरीर तो मरणधर्मा है, यह तो अवश्य करेगा। फिर हम अमर कैसे हो? वेद उत्तर देता है कि शुद्ध, पूत और यज्ञीय बनो। आहार, व्यायाम, तप द्वारा शरीर को शुद्ध और सुदृढ़ बनाओ और दीर्घ आयु को प्राप्त करो। दूसरा है पूत अर्थात् पवित्र। सत्वशुद्धि और सौमनस्य के द्वारा अपने अन्तःकरण (मन–बुद्धि–चित्त–अहकार) को पूत अर्थात् पवित्र करो। सत्वशुद्धि यानि सतोगुण की वृद्धि करो, रजोगुण व तमागुण को क्षीण करते जाओ। सौमनस्य यानि द्वेषरहित होते जाओ, प्राणीमात्र से प्रेम करो। तीसरा है यज्ञीय बनो यानि कि निष्काम भाव से शरीर व मन से परोपकार के कर्म करते जाओ।

इस प्रकार मनुष्य दीर्घायु होता है व कुछ क्रिएटिव कर जाने से अमर हो जाता है। जैसे मार्यादा पुरुषोत्तम राम, योगीराज कृष्ण, महर्षि दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, गुरुनानक, कबीर, तुलसी, हनुमान, कपिल, कणाद, पतंजलि, जनक, अशोक, शिवाजी भगत सिंह, पटेल आदि न जाने कितने लोग अपने आप को अमर कर गए व अमर पुत्र बने। जितने भी मनुष्य अमर हुए हैं उन सबका मन जागृत था। हमारा मन कैसा भी है उसे सत्संग, स्वाध्याय, जप, तप द्वारा बदला जा सकता है। एक कथानक है कि एक चोर था। एक दिन चोरी करके रात्रि

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 02 का शेष

त्यागमयी देवियाँ

एक–एक बात और घटना का पूरा परिचय रहता था, और विरक्त इतने थे कि जैसे किसी से कोई सम्बन्ध ही नहीं। प्रजा उन्हें देवता समझती थी।

ऐसा धर्मात्मा पिता पाकर सीता के हृदय पटल पर भी उसी प्रकार की भावनाएँ अंकित होने लगीं। जनक और उनकी पत्नी ने सीता को उन सारे गुणों से सुसज्जित कर दिया जो एक स्त्री के लिए आवश्यक होते हैं, अर्थात् मीठा बोलना, परिवार के हर व्यक्ति का ध्यान रखना कि उसे कोई कष्ट तो नहीं, माता–पिता का साथ तो युवावस्था आते ही छूट जाता है, इसके पश्चात् श्वसुर के घर में जाकर पति, सास, श्वसुर, देवर इत्यादि की सेवा करना, परिवार का सुन्दर संगठन बनाए रखना– ये सारी शिक्षाएँ माता ने सीता को दे दी।

ऐसी सुन्दर शिक्षा के अतिरिक्त वेद, उपनिषद, दूसरे धर्म–ग्रंथ और आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के ढंग सीतो को पढ़ाए–सिखाए गए।

सीता का रूप लावण्य भी अद्भुत था। जो भी उसे देखता विस्मित रह जाता। युवा–अवस्था सीता के मुख–मण्डल पर नृत्य करने लगी तो माता–पिता विचार करने लगे कि इसके योग्य वर कैसे मिले? विचार–विनिमय के पश्चात् उन्होंने स्वयंवर करने का निश्चय किया। यह भी निश्चय कि महादेव ने दक्ष यज्ञ नष्ट करने के लिए जो धनुष तैयार किया था, उस पर जो वीर योद्धा प्रत्यंचा चढ़ाएगा, सीता उसके गले में वर–माला डालेगी ओर सीता उसी की होगी।

इस निश्चयानुसार स्वयंवर रचा गया। देश–देशान्तरों के राजे और राजकुमार मिथिला नगरी में पहुँचे, बड़े–बड़े योद्धा भी पधारे और शिव–धनुष पर अपनी शक्ति की परीक्षा देने लगे। यह शिव–धनुष इतना भारी था कि कोई भी अकेला वीर उसे उठा भी नहीं सकता था। सारे योद्धा और राजा तथा राजकुमार जब शिथिल पड़ गए और स्वयंवर की प्रतिज्ञा कोई भी पूर्ण न कर सका तो जनक जीवन मुक्त होते हुए भी चिन्ता में लीन हो गए कि क्या सीता जीवन –भर कुँवारी ही रहेगी?

सीता को अपने विवाह की चिन्ता नहीं थीं, परन्तु उसे यह चिन्ता अवश्य दुःख दे रही थी कि उसके कारण देवता–सदृश पिता को कष्ट हो रहा है।

पुत्रियों का स्वभाव ही ऐसा होता है कि वे अपने माता–पिताको कष्ट में नहीं देख सकतीं। क्या आप नहीं देख रहे कि आधुनिक काल में हिन्दू समाज की अवस्था बिगड़ जाने के कारण कन्याओं के विवाह पर भारी दहेज माँगा जाने लगा है? निर्धन माता–पिता के पास उतना धन नहीं होता और वे चाहते हैं कि कहीं से ऋण भी नहीं मिलता और रात्रि को निद्रा भी नहीं आती। दिन को माता भी रोती है, पिता भी रोता हैं पुत्री इस सारे दृश्य को देखती और समझती है कि हिन्दू–समाज में अवैदिक विचारों के कारण उसके माता–पिता को दुःख भोगना पड़ रहा है। अपनी जननी और पिता के दुःख के कारण को दूर करने के लिए वह विष खा लेती है। तेल शरीर पर डालकर जीवित जल मरती है या कुएँ में कूदकर अपना अन्त कर लेती है। ऐसी घटनाएँ अनेक हो चुकी हैं। जब जनता पुकार उठी कि आत्महत्या भी पाप है तो अब ऐसी देवियों ने जीवन–भर अपने आपको परी की भट्टी में जलाना भी स्वीकार कर लिया है। धन कमाने के लिए अब वे पढ़–लिखकर नौकरियाँ करती हैं; कष्ट सहन करती हैं, सारी आयु तिल–तिल जलती हुई जीवन व्यतीत कर जाती हैं, परन्तु माता–पिता को दुःखी करना सहन नहीं कर सकतीं। जब आजकल पुत्रियों की यह भावना है तो जनक–काल की तो बात ही और थी।

सीता भी इसी प्रकार से चिन्तित थी और वह भगवान् से प्रार्थना कर रही थी कि कोई ऐसा शूरवीर आए जो उसके माता–पिता को इस चिन्ता से मुक्त करे।

क्रमशः

गतांक से आगे...

आओ चलें,

वैज्ञानिक धर्म एवं धार्मिक विज्ञान की ओर

● आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

मैं अनुभव करता हूँ कि आधुनिक विकसित भौतिक विज्ञान को इस ग्रन्थ के द्वारा एक क्रान्तिकारी दिशा दी जा सकती है। जिन बिन्दुओं व प्रश्नों का हल अब तक अध्ययन से मिलेगा, वे बिन्दु संक्षेप में निम्नानुसार हैं:–

1. बल की अवधारणा जो आज अत्यन्त अस्पष्ट व अपूर्ण है। जिस पर प्रख्यात अमरीकी वैज्ञानिक रिचर्ड पी. फाइनमैन के डायग्राम्स को विश्वभर में अत्यन्त प्रामाणिक माना जाता है। इस विषय पर फाइनमैन से बहुत आगे जागर लेख लिखा जा सकता है।

2. Unified force theory को भी समझा पाने की स्थिति बन पायेगी।

3. बल व ऊर्जा के स्वरुप व उनकी उत्पत्ति के रहस्य को सुलझाया जा सकेगा।

4. जिन्हें संसार आज मूल कण मानता है, उनके मूल कण न होने तथा इनके निर्माण की पूर्ण प्रक्रिया को बहुत विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता है। वर्तमान विज्ञान इस विषय में विचार भी नहीं कर पा रहा है अथवा कर रहा है।

5. विभिन्न मूल कणों व क्वाण्टाज् की संरचना, स्वरूप व व्यवहार के अज्ञात रहस्यों को उद्घाटित करना।

6. कणों व क्वाण्टाज् की द्वैत प्रकृति की वैदिक व्याख्या करना।

7. ब्लैक होल के स्थान पर विश्वविख्यात भारतीय खगोलशास्त्री डॉ. मित्रा साहब के ई.सी.ओ. मॉडल से मेरा ऐतरेय विज्ञान भी सहमत है। मैं इस विषय में विचार करना चाहता हूँ।

8. सृष्टि निर्माण की प्रक्रिया को वर्तमान किसी सिद्धान्त से आगे ले जाकर विस्तार से अनादि मूल पदार्थ से लेकर तारों के निर्माण तक के विषय में भी विस्तार से लिखने की आवश्यकता है।

9. डार्क इनर्जी जिसे बिग बैंग के लिए उत्तरदायी माना जाता है, के दूसरे स्वरूप जिसमें बिग बैंग नहीं बल्कि अनेक विस्फोट सदैव होते रहते हैं, सृष्टि की हर क्रिया में उसकी भूमिका को दर्शाना होगा। मेरी डार्क एनर्जी वर्तमान विज्ञान द्वारा कल्पित डार्क इनर्जी से भिन्न होगी।

10. विभिन्न गैलेक्सियों सौर मण्डलों में तारों व ग्रहादि लोकों के परिक्रमण का प्रारम्भ व इनके गुप्त विज्ञान को विस्तार से प्रकाशित करने का प्रयत्न होगा।

11. वर्तमान विज्ञान में कल्पित वैक्यूम इनर्जी के रूप में एक अन्य लगभग सर्वव्यापक ऊर्जा के स्वरूप को बतला ने की आवश्यकता है।

12. सृष्टि विज्ञान, खगोल विज्ञान एवं कण भौतिकी के अनेक रहस्यमय बिन्दुओं पर प्रकाश डालना होगा।

13. स्पेस, गुरुत्व, काल के रहस्यमय स्वरूप व उत्पत्ति प्रक्रिया को स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

14. इन सब कार्यों के लिए ईश्वर नामक चेतन, सर्वव्यापक व सर्वज्ञ, निराकार व सर्वशक्तिमयी सत्ता की अनिवार्यता को भी सिद्ध किया जाना चाहिए।

15. ईश्वर के स्वरूप, उसकी कार्यशैली के वैज्ञानिक स्वरूप को स्पष्ट करना होगा।

16. वेद मंत्र इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त विशेष प्रकार की तरंगों के रूप में ईश्वरीय रचना हैं, ये मंत्र किसी भी अन्य ग्रन्थ के समान नहीं हैं। इसे भी सिद्ध किया जा सकता है।

17. वैदिक मंत्रों रूपी Vibrations के अद्भुत् स्वरूप के द्वारा समस्त सृष्टि के उत्पन्न होने में महान् व गुप्त विज्ञान को प्रकाशित करके वेद तथा वैदिक संस्कृत भाषा की सार्वत्रिकता व शाश्वतता सिद्ध करके ब्रह्माण्ड विज्ञान के कई अनसुलझे रहस्यों को खोलना होगा, इससे वेद व ऋषि मुनियों पर साम्प्रदायिकता का मिथ्या कलंक सदा के लिए मिट जाएगा।

18. मैं सत्यधर्म व कल्याणकारी भौतिक विज्ञान का पारस्परिक अभेद सिद्ध करके संसार को इनकी ओर ही बढ़ने का आह्वान करूँगा।

19. भारतीय संस्कृति, सभ्यता के प्रति घृणा व उपेक्षा का भाव रखने वाली बनी युवा पीढ़ी, मीडिया व कथित प्रबुद्ध वर्ग की दूषित व रुग्ण मानसिकता की चिकित्सा करके भारतीय संस्कृति सभ्यता की महती वैज्ञानिकता समझा कर प्राचीन भारतीय गौरव की रक्षा करनी होगी।

मुझे आशा है कि मेरा ऐतरेय ग्रन्थ का वैज्ञानिक व्याख्यान ही मेरे उपरोक्त व्रत को पूर्ण करने का समर्थ साधन बनेगा और सृष्टि के रहस्यों को खोजने के इच्छुक विश्व के महान् वैज्ञानिक आगामी कुछ दशक तक इस व्याख्यान पर शोध करते रह सकेंगे। अति उच्च स्तरीय भौतिक वैज्ञानिकों से मेरी अपेक्षा यह है कि वे मुझे वर्तमान विकसित भौतिक विज्ञान में आ रही ऐसी समस्याओं, जिनका समाधान उन्हें नहीं सूझ रहा, की जानकारी निःसंकोच देने की कृपा करते रहें। मुझे आशा है कि उन समस्याओं का समाधान ऐतरेय ब्राह्मण व वेद आदि पर चिन्तन करके कुछ समय पश्चात् मैं दे पाऊँगा। मैं उच्च स्तरीय प्रयोगशालाओं को देखने की भी महती इच्छा रखता हूँ, साथ ही वैज्ञानिकों से वर्तमान भौतिकी के मूलभूत सिद्धान्तों को समझने की भी उत्कृष्ट इच्छा रखता हूँ। इससे भी मेरे काम को गति मिल सकेगी।

हम और आधुनिक भौतिक वैज्ञानिक परस्पर विरोधी, प्रतिस्पर्धी नहीं बल्कि पूरक व मित्र बनकर धर्म को वैज्ञानिक आधार तथा विज्ञान को कल्याण व शान्ति का साधन बना सकते हैं। ऐतरेय ब्राह्मण पर मेरे व्याख्यान के पूर्ण होने तक (लगभग दो वर्ष) मैं उसके विज्ञान पर कुछ भी कहना नहीं चाहूँगा। मेरा न तो कोई मार्गदर्शक है और न सुस्पष्ट कोई साहित्य व परम्परा विश्वभर में दिखाई देती है। मेरा भाष्य पूर्ण होने पर प्रतिदिन वैज्ञानिकों के साथ सर्वत्र चर्चा करना ही एक मात्र कार्य रह जायेगा और अनेक नवीन क्षेत्रों में प्रयोगों का मार्ग खुल जायेगा। मैं अपना कार्य पूर्णतः निष्कामभाव से सर्व संसार के हितार्थ कर रहा हूँ। मेरे जीवित रहने का केवल यही एकमात्र उद्देश्य रह गया है, अन्य कोई इच्छा इस संसार में शेष नहीं है।

मेरे हृदय में तीव्र इच्छा है कि **संसार का प्रत्येक मानव सत्य का प्रबल पक्षधर व अन्वेषक बने। यदि ऐसा न कर सके तो सत्य अन्वेषण में स्वसामर्थ्यानुसार सहयोग तो करे ही। यदि सहयोगी भी बन सके तो कम से कम किसी पूर्वाग्रह, दुराग्रह, पद–प्रतिष्ठा धन की लालसा में अथवा अनेकता में एकता की भ्रान्त धारणा, कल्पित भ्रान्त मानवता, मिथ्याधारित राष्ट्रियता, मिथ्या सैक्यूलरिज्म के वशीभूत होकर सत्य का विरोधी तो नहीं बने।** प्रत्येक मानव को यह बात हृदय की गहराइयों तथा मस्तिष्क के चिन्तन की ऊँचाइयों से विचारनी चाहिए कि **सत्य धर्म तथा विज्ञान दोनों की ही कोई भौगोलिक सीमा नहीं होती है। तब नस्ल, भाषा, वर्ग, सम्प्रदाय का भेद तो नितान्त भ्रामक कल्पना है।** यद्यपि मैं यह स्वीकारता हूँ कि कुछ बातें देश काल परिस्थिति के अनुसार बदल भी जाती हैं, परन्तु इसी तर्क पर भिन्न–भिन्न परस्पर विरुद्ध विचारों को सत्य मान लेना सत्य के साथ घोर अन्याय है। ईश्वर के नियम सार्वदेशिक, शाश्वत तथा सर्वहितकारी होते हैं।

ईश्वर एक है, उसकी व्यवस्थायें भी एक ही हैं, चाहे वे भौतिक क्षेत्र में हों अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में। उन्हें ही सत्य धर्म तथा वास्तविक विज्ञान कहा जा सकता है और उसी सत्यमार्ग पर मानव मात्र को प्रवृत्त करना मेरा ध्येय है। मैं संसार भर के विद्वानों, वैज्ञानिकों, दार्शनिकों व धर्मानुरागियों के स्नेह व सहयोग का अभिलाषी हूँ। इसके साथ ही मैं विश्वभर के प्रबुद्धजनों, प्यारे छात्र–छात्राओं, पत्रकारों, शिक्षाविदों, समाज–शास्त्रियों, अर्थ–शास्त्रियों, राजनेताओं, उद्योगपतियों, व्यापरियों, कृषकों, श्रमिकों, नास्तिकों, साम्यवादियों या अन्य किसी भी क्षेत्र के प्रतिभाशाली युवाओं का आह्वान करता हूँ कि मेरे विचारों व उद्देश्य पर एक बार शान्त व निष्पक्ष हृदय एवं प्रखर तार्किक मस्तिष्क से गम्भीरता से विचार करें। यदि उनके निष्पक्ष आत्मा को यह मार्ग सत्य व हितकारी प्रतीत हो तो अपने–अपने ढंग से यथेष्ट प्रचार व सहयोग करें व करावें।

आइये! मेरे विश्व भर के मित्रजनो! हम सब मिलकर इस पृथिवी को परमात्मा का एक परिवार मानकर वेद के शब्दों में कहें–

संगच्छध्वं संवदध्व... समानी।
समानो मंत्रः समितिः। समानं मनः सह चित्तमेषाम्...

(ऋग्वेद 10.191.1–2)

अर्थात् हम सब मानव प्राणिमात्र के कल्याणार्थ साथ–साथ चलें, समान विचार वाले बनें, हमारी मन्त्रणायें, सभायें, मन, चित्त, हृदय सभी समान भाव रखने वाले हों। कोई भी परस्पर विरोधी न रहे, जिससे संसार में सर्वत्र शान्ति, आनन्द, भातृभाव का सुखद साम्राज्य हो।

वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम
भीनमाल, जिला–जालोर, राजस्थान–343029
दूरभाष– 09414182173

☞ पृष्ठ 08 का शेष

दिव्य मन

के समय एक आश्रम में जा घुसा। वहाँ पर आश्रम के महात्मा जी ने उसे देख लिया और उससे पूछा तुम कौन हो, वह कहता है, मैं चोर हूँ। मुझे रात्रि में यहाँ रहना है, मेरे पीछे पुलिस लगी हुई है। महात्मा जी कहते हैं कि तुम चोर हो, यहाँ नहीं रह सकते, आश्रम की बदनामी होगी। चोर कहता है, आश्रम का मतलब ही आश्रय स्थल है, यहाँ आश्रय न मिलेगा तो कहाँ मिलेगा। ऐसा कहते–कहते वह वहाँ सो गया। महात्मा जी रात्रि भर सो न पाए। प्रातःकाल चोर को महात्मा जी ने जगाया और कहा कि अब चले जाओ सत्संग प्रारम्भ होने वाला है सत्संगी आ जाएँगे वरना आश्रम की बदनामी होगी। चोर कहता है अब तो मैं सत्संग सुने बिना नहीं जाऊगा। प्रवचन बहुत प्रभावशाली था। प्रवचन समाप्त हुआ तो महात्मा जी ने कहा अब तो जाओ। चोर कहता है अब तो बिल्कुल न जाऊँगा। मैंने आज से चोरी छोड़ दी। सारी उमर पुलिस से भागता रहा, यहाँ तो शांति है, आनन्द है, सुख है। वह धीरे–धीरे आश्रम में सेवा करने लगा। महात्मा जी का सदशिष्य बन गया, पूजा–पाठ–ध्यान–साधना–जप–तप उसके जीवन के अंग बन गए। अन्ततोगत्वा महात्मा जी ने उसके आचरण को मद्दे नज़र रखते हुए आश्रम की गुरुगद्दी उसे सौंप दी। सत्संग से उसका मन बदला और जीवन ने एक करवट ली और वह व्यक्ति कहाँ से कहाँ पहुँच गया।

हम भी अपने मन की शक्ति को पहचानें इसे जागृत करें। यह दिव्य मन प्रभु की अनमोल देन है। हम शुद्ध, पूत और यज्ञीय बनें और मृत्यु के पैर को धकेल कर अमरत्व प्राप्त करने का यत्न करें।

मन्त्री आर्य समाज
मॉडल टाऊन यमुनानगर
9416446305

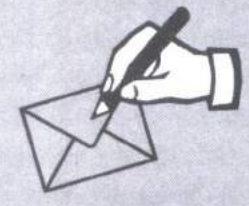

पत्र/कविता

नाभिकेन्द्र है विश्व का मूढ़ बचाले गाय

लहू गाय का जित गिरे उत उत्पादी क्लेश।
झाग जुगाली का जहाँ प्रकटें वहाँ महेश।।

जो गैया को मारते नीच बहाते खून।
उनकी संतति बेचती ठिठुर–ठिठुर कर ऊन।।

गोमुख से गंगा चले गोधूली का ब्याह।
जहाँ गाय निज खुर धरे वहाँ वाह पर वाह।।

कामधेनु धन दे रही दूध–दही–घी–छाछ।
गाय–पाल गोपाल बन वो समृद्धि के गाछ।।

नाभिकेन्द्र है विश्व का मूढ़ बचाले गाय।
गाय बचायेगी तुम्हें बनकर पन्ना धाय।।

कैसा था जग क्या हुआ लगी गाय की हाय।
ग्लोबल वार्मिंग से जले धरा–गगन असहाय।।

गाय–पाल खुशहाल थे दुनिया भर के लोग।
भैंस–भवानी ने दिये नीरोगी को रोग।।

त्याग यूरिया–फूरिया जले भूरिया खाल।
काले–पीले हो गये गाल टमाटर लाल।।

कृषि प्रधान यह देश था लोग–बाग खुशहाल।
गो–पालन के बरसते हीरे–मोती लाल।।

कृत्रिमता कृत्रिम करे लेय असल को छीन।
त्याग विषैला यूरिया फिर से गोबर बीन।।

डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी
A–1/13–14 सेक्टर –16
रोहिणी, नई दिल्ली–110085
मो: 9810835335

डी.ए.वी. शिक्षा बोर्ड बनाने का प्रयास करें

महात्मा हंसराज विशेषांक मिला, अति सुन्दर है, कागज–छपाई एवं फोटो सर्वोत्तम हैं। इसका मूल्य 25रू. होना चाहिए था। आवरण पृष्ठ लम्बे समय से इसी रूप का होता है। इसमें भी परिवर्तन होते रहना चाहिए। महात्मा हंसराज (संस्थापक डीएवी) लिखना ज्यादा अच्छा है। डीएवी शिक्षा बोर्ड बनाने का प्रयास किया जाए। बी.ए., एम.ए. तथा अन्य ऊँची कक्षाओं में एक मिनट की प्रार्थना अनिवार्य की जाए। बीस सैकिण्ड में गायत्री मंत्र का उच्चारण किया जाए चालीस सैकिण्ड में छह लाइनों के पाठ्य का उच्चारण संभव है। सरकारी अनुदान कम से कम लिया जाए अन्यथा कॉलेजों का वातावरण आर्यमय नहीं रहेगा बल्कि वे भी सामान्य कॉलेज जैसे दिखाई देंगे।

इन्द्रदेव गुलाठी
18/186 टीचर्स कॉलोनी
बुलंदशहर, उ.प्र.

****

बहु संख्या आयोग व मंत्रालय का गठन हो

राजधानी दिल्ली के मोती नगर के बसई दारापुर गाँव में युवा बेटी पर अभद्र टिप्पणी करने का विरोध करने पर 51 साल के ध्रुव राज त्यागी की मोहम्मद आलम व उसके पिता जहांगीर खान आदि ने मिलकर निर्मम हत्या कर दी तथा पिता को बचाने आये 19 वर्षीय पुत्र अनमोल त्यागी को भी चाकुओं से बुरी तरह घायल किया जो चिकित्सालय में मौत से लड़ रहा है। यह दर्दनाक जिहादी घटना दिल्ली में मतदान की पूर्व देर रात्रि 11 मई की है।

निःसंदेह देश की राजधानी दिल्ली में गैर मुस्लिम बहन–बेटियाँ सुरक्षित नहीं। नित्य प्रतिदिन कहीं न कहीं हिन्दू व सिख आदि अबलाओं पर मुस्लिम समुदाय के लड़के अत्याचार करते रहते हैं जो बचाव में आने वाले परिजनों की हत्या से भी नहीं चूकते। "बेटी बचाओ बेटी बढ़ाओ" के लिए समर्पित सरकार कब तक ऐसे जिहादी कृत्यों पर मौन रहेगी?

इस्लामिक आतंकवाद के इस रूप को न समझना आत्मघाती हो रहा है। अधिकांश टीवी चैनल वाले जिहादियों की पोल खोलने से बचते हैं। प्रिंट मीडिया के बड़े समाचार पत्रों को अपराधियों के नाम देने में असहिष्णु व सांप्रदायिक होने का डर लगता है। आतंकवादियों को बचाने के लिए ढाल बन कर खड़े होने वाले सेक्युलरों व मानवाधिकारिवादियों की दूर–दूर तक कोई आवाज नहीं उठी। ऐसी परिस्थितियों में देश में एक बहुसंख्या आयोग व मंत्रालय का गठन किये जाने की आवश्यकता है।

राष्ट्रवादी समाज अब ऐसे अत्याचारों पर मौन नहीं रहना चाहता? पीड़ित परिवार के समर्थन में सोशल मीडिया में आ रही सूचनाओं के कारण सैकड़ों हज़ारों लोग आंदोलित हो गए हैं। अपराधियों के नाम स्पष्ट न होने से अत्याचारियों का दुःसाहस बढ़ता ही रहा और पीड़ित समाज का उत्पीड़न होता रहा।

अब डिजिटल युग में सोशल मीडिया के बढ़ते दबाव के कारण अपरिधियों पर अंकुश लगना व शासन द्वारा भी इन अपराधियों के प्रति यथासंभव संज्ञान लेना आवश्यक होता जा रहा है। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसी दर्दनाक घटना में भी कुछ असंवेदनशील तत्व अपने मोबाइल फोन से वीडियो बनाने में जुटे रहे जबकि वे आगे बढ़कर उस पिटते हुए व्यक्ति के जीवन की सुरक्षा कर सकते थे। हम सब एकजुट होकर अपराधियों व आतंकवादियों से अपने परिवार, समाज, नगर, प्रदेश व देश को सुरक्षित रखने में सफल हो सकते हैं।

विनोद कुमार गुप्ता
guptavinod038@gamil.com

****

हिंदू बहनों का जबरन नहीं हुआ धर्मांतरण : पाक कोर्ट

इस्लामाबाद उच्च न्यायालय ने छह सदस्यीय आयोग का गठन किया था जिसमें एक हिन्दू भी था। इस आयोग को रिपोर्ट देनी थी कि 13 वर्षीय और 15 वर्षीय सगी बहनों का अपहरण करके जबरन इस्लाम स्वीकार कराके मुस्लिम युवकों से निकाह कराया गया था या नहीं? आयोग इसलिए बनाया गया क्योंकि हिन्दू संगठनों ने प्रबल विरोध–प्रदर्शन किए थे और दोनों नाबालिग लड़कियों की सुरक्षित वापसी की माँग की थी।

रिपोर्ट 5 सदस्यीय आयोग ने दी है जिसमें जबरन धर्म परिवर्तन को अस्वीकार किया गया है। ऐसा लगता है कि आयोग के एक मात्र हिन्दू सदस्य को हटा दिया गया है अथवा उसने अपनी सहमति नहीं दी है। यदि सहमति नहीं दी है तो रिपोर्ट 5–1 के बहुमत से दिखाई जानी चाहिए थी।

हिन्दुओं को मूर्ख बनाने के लिए सदस्यों की संख्या छह की जगह पाँच दर्शा दी गई है जिसकी कटु निन्दा और भर्त्सना की जानी चाहिए।

आन्दोलन करने वाले विभिन्न संगठनों को सर्वोच्च न्यायालय जाना चाहिए और अखबारों में अपने विचार व्यक्त करने चाहिएँ। उनका मौन रहना उचित नहीं है।

डॉ. गिरीश चन्द्र गुप्ता, पूर्व मंत्री
18/186, टीचर्स कॉलोनी
बुलन्दशहर (उ.प्र.)

****

बेटा-बेटी में फर्क कब तक

एक सदी पूर्व आज समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द जी ने समाज की बुराई को दूर करने के उद्देश्य से स्त्री–पुरुष को यज्ञ शाला में कन्धे–से–कन्धा मिलाकर यज्ञ करने की पहल की थी।

परन्तु खेद है कि 21वीं सदी में भी लड़कियों के शिक्षा संस्थान लड़कों के शिक्षण संस्थानों मुकाबले में काफी कम है। ऐसा भेदभाव क्यों?

यह भी खेद है कि अधिकांश धार्मिक संस्थान भी इस भेदभाव को समाप्त नही कर पा रहे?

हमारा देश के समस्त राजनैतिक विद्वानों से आग्रह है कि समस्त शिक्षा संस्थानों में सह शिक्षा का प्रावधान अनिवार्य किया जाये। बेटी यदि अशिक्षित रहेगी तो परिवार का पालन कैसे होगा। बेटी–बेटा एक समान कब होगा।

कृष्णमोहन गोयल
113 बाजार कोट, अमरोहा

****

मॉडल टाउन जालन्धर में वैदिक चेतना एवं चरित्र निर्माण शिविर

दयानंद मॉडल स्कूल, मॉडल टाउन, जालंधर में वैदिक एवं चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया । शिविर में विद्यार्थियों को वेदों का ज्ञान देने का सक्रिय प्रयास किया गया । पंजाब के डी.ए.वी. स्कूलों के 150 विद्यार्थियों और 30 अध्यापकों ने इस चेतना शिविर में हिस्सा लिया।

जस्टिस श्रीमान एन. के. सूद (वाईस प्रेसीडेंट डी.ए.वी.सी.एम.सी. नई दिल्ली) एवं. उनकी धर्मपत्नी श्रीमती अरुणिमा सूद, श्रीमान अरविन्द घई (सेक्रेट्री डी.ए.वी.सी.एम.सी. नई दिल्ली) एवं. उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रश्मि घई जी ने इस छः दिवसीय कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

चेतना शिविर के समापन समारोह में श्री जे.पी. शूर (डायरेक्टर पी.एस.-I डी.ए.वी.सी.एम.सी. नई दिल्ली) उपस्थित हुए। श्री शूर ने कि कहा कि इस युग में बच्चों में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता बहुत अधिक है और केवल डी.ए.वी. संस्थाएं ही ऐसी हैं जो इस आवश्यकता को पूर्ण करने में सक्षम है।

चेतना शिविर में आए हुए विद्यार्थी प्रातः जल्दी उठकर योगाभ्यास करते, उसके बाद वैदिक मंत्रों के उच्चारण द्वारा यज्ञ करते। यज्ञ के पश्चात विद्यार्थी आचार्य महावीर मुमुक्षु के मूल्यवान विचारों को ग्रहण करते। इस के अतिरिक्त शिविरार्थी अन्य गतिविधियों में भाग लेते जैसे भजन गायन, मंत्र गायन, वैदिक प्रश्नोत्तरी, भाषण प्रतियोगिता एंव चित्रकला प्रतियोगिता आदि। दोपहर के भोजन के बाद बच्चों को आर्य समाज एवं. देश भक्तों से सम्बंधित प्रेरक चलचित्र भी दिखाए जाते, शाम के खेलकूद कार्यक्रम के बाद सायं कालीन संध्या का भी आयोजन नन्हे आर्यों के लिए किया जाता था । यह सभी गतिविधियाँ बच्चों को जिंदगी में आगे आने वाली चुनौतियों का डटकर सामना करने में सक्षम बनाने वाली थी।

प्रधानाचार्य श्रीमान विनोद कुमार जी ने चेतना शिविर में आए हुए सभी दिग्गजों का उनके सफल निर्देशन और समर्थन के लिए आभार प्रकट किया । प्रधानाचार्य जी ने कहा कि आने वाले समय में भी ऐसे ही शिविर आयोजत किए जायेंगे। उन्होंने विद्यार्थियों की भूरि–भूरि प्रशंसा की एवं आए हुए महानुभावों को हृदय से धन्यवाद दिया।

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी मॉडल स्कूल, अबोहर में विद्यार्थी पदाधिकारियों का शपथ ग्रहण

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी मॉडल स्कूल अबोहर में अनुशासन, कर्त्तव्य व जिम्मेदारी की भावना को जागृत करने के उद्देश्य से पद शपथ ग्रहण समारोह 2019 का आयोजन विद्यालय के सृजन सभागार में किया गया। इस अवसर पर विद्यालय के पूर्व छात्र व वर्तमान में आई पी एस चयनित हुए श्री अर्शदीप सिंह पँवार मुख्यातिथि थे। समारोह का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलित कर डीएवी– गान द्वारा किया गया।

मुख्यातिथि का बैंड धुन पर समूहगान टीम द्वारा स्वागत गीत प्रस्तुत कर मुख्यातिथि व अन्य अतिथियों का स्वागत किया गया।

मुख्यातिथि, श्री अर्शदीप पँवार, ने अपने संबोधन में कहा कि आज इस सभागार में अपने आप को पाकर मुझे भी अपने विद्यार्थी जीवन के दिनों की याद ताज़ा हो उठी है। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों को सांझा करते हुए बच्चों को जीवन में सदैव उत्सुकता, समर्पण, दृढ़ निश्चय, कर्त्तव्य, जिम्मेदारी व अनुशासन में रहते हुए हर कार्य को निभाने की सीख दी। उन्होंने पंजाबी के प्रसिद्ध कवि अवतार सिंह पाश व सुरजीत पातर की कविता को पढ़ते हुए कहा कि सपनों को कभी मरने न दें व सभी विद्यार्थी उच्च से उच्च सपनों को देखें। दृढ़ निश्चय के साथ नए रास्ते बनाने वाला व्यक्ति ही जीवन में श्रेष्ठ मंजिल को प्राप्त करता है।

चेयरमैन श्री देव मित्र आहूजा द्वारा विद्यार्थी कौंसिल के सभी नव नियुक्त पदाधिकारियों को बधाई देते हुए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की गई।

प्रिंसिपल श्रीमती स्मिता शर्मा ने अपने सम्बोधन में कहा कि जीवन में विद्यर्थियों को सदैव लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए और लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए रास्ते में आने वाली चुनौतियों का डटकर सामना करना चाहिए। उन्होंने विद्यार्थियों को कहा कि मुख्यातिथि के जीवन से प्रेरणा लेकर अपना लक्ष्य हासिल करें।

प्राचार्या द्वारा विद्यार्थी पदाधिकारियों को स्कूल कैप्टन (लड़के) मास्टर अर्जुन ठठई, वाइस कैप्टन मास्टर शपथ ग्रहण करवा कर व पद पट्टिका पहना कर जिम्मेदारी सौंपी गई। हिंदी विभाग के शिक्षक नीरज शर्मा द्वारा अलंकरण समारोह के महत्व पर प्रकाश डाला गया व विद्यालय की इस श्रेष्ठ परंपरा , अलग अलग सदन व उनकी गतिविधियों संबंधी जानकारी दी गई।

सांस्कृतिक कार्यक्रम में समूहगान, गीत, जिम्मेदारी गीत, देश कोरियोग्राफी, गुरुदेव रविंदर नाथ टैगोर की लघु नाटिका व पंजाब का लोक नृत्य गिद्धा व भंगड़ा भी प्रस्तुत किया गया।

स्कूल सुपरवाइजर श्रीमती सुनीता सहगल द्वारा आए हुए सभी अतिथियों का धन्यवाद किया।

☞ *पृष्ठ 01 का शेष*

डी.ए.वी. सैक्टर-14, गुरुग्राम ...

पर उन्हें, उनके अभिभावकों तथा अध्यापकों को बधाई दी। उन्होंने अपने वक्तव्य में छात्रों को संबोधित करते हुए कहा कि वे सभी मील के पत्थर हैं जोकि एक संरक्षित वातावरण में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे परन्तु अब उन्हें दुनिया को जीतना है, जिस क्षेत्र में भी वे कदम रखें उसमें चरमोत्कर्ष को छुएँ लेकिन विद्यालय द्वारा सिखाए गए नैतिक मूल्य जोकि उनके जीवन के आधार हैं उन्हें कभी नहीं भूलें।

डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के उपाध्यक्ष तथा विद्यालय के अध्यक्ष श्री प्रबोध महाजन जी ने छात्रों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए प्रेरक व्याख्यान दिया। उन्होंने अंकों के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा कि अंकों की अनिवार्यता केवल उत्तम शिक्षण संस्थान में प्रवेश हेतु है। जीवन का मूल मंत्र तो उद्यम, बुद्धि, साहस, शौर्य, संयम तथा पराक्रम है। उन्होंने वैदिक शिक्षा को नैतिक मूल्यों का आधार बताते हुए छात्रों को आशीर्वचनों के साथ भावी जीवन के लिए शुभकामनाएँ दीं। डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के उपाध्यक्ष श्री मोहनलाल जी, विद्यालय के प्रबंधक श्री आर.आर. भल्ला जी के साथ स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति के सदस्यों ने कार्यक्रम की शोभा का संवर्धन किया।

सभागार में उपस्थित अतिथियों के द्वारा सर्वोच्च अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को ट्रॉफी तथा छात्रवृत्ति प्रदान करके उनका उत्साहवर्धन किया। अंत में राष्ट्रगान द्वारा कार्यक्रम का समापन किया गया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 29/30-05-2019

D.A.V PUBLIC SCHOOL

NIT CAMPUS, ADITYAPUR

Managed by DAV College Managing Committee, New Delhi-55)
Affiliation No. 3430139. School No. 09523

A BRIEF ACCOUNT OF D.A.V. PUBLIC SCHOOL, NIT CAMPUS, ADITYAPUR

DAV Public School, NIT Campus, spread its wings on 3rd March, 1991, with the blessings of the Board of Governors of NIT, Adityapur. It had a modest beginning in a few tin sheds, but in its twenty five years' odyssey, DAV NIT has metamorphosed as a prestigious cradle in the field of education in the district of Seraikela-Kharsawan, igniting the minds of 35oo children, surging ahead with a dedicated and qualified workforce comprising 88 teachers and 33 support staff. DAV NIT can very safely boast of producing IITIANS,, NITIANS, doctors, Chartered Accountants and successful entrepreneurs over the years. In 2018, 5 students secured 90% and above in AISSCE while 24 students made us proud by securing 10 CGPA in AISSE. 31 of our brightest sparks qualified various competitive examinations, adding to the prestige and aura of this institution.

Our achievements in the sporting arena speak volumes about our commitment to eulogize sportspersons. Our basketball, boxing, taekwondo and handball boys and girls' teams stole the show at the DAV Zonal Level Meet. Winning has become a habit and our show stealers clinched the title in the boys and girls categories at the DAV National Level Meet.

Blessed with a mellifluous voice that has enthralled audiences worldwide, our music teacher Mr. Nilanjan Mitra left his indelible imprint at the DAV National level music teachers' competition by lifting the Winners trophy in 2019.

Under the able stewardship of Mr. O P Mishra, the school is bracing itself to face fresh challenges and achieve greater heights of glory and recognition befitting its stature.

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**